प्रकाशक : मन्त्री, सर्व-सेवा-संघ-प्रकाशन,
राजघाट, वाराणसी-२२१००१

संस्करण : चौथा
प्रतियाँ ३,०००
कुल प्रतियाँ : १२,०००
जून, १९८१
मूल्य : ५ रुपये

मुद्रक : डेमियन प्रेस
7 (i) स्टेशन रोड,
वाराणसी कैंट

प्रकाशकीय

चौथा संस्करण

'सिरजनहार' से 'मृत्यु' पर्व तक के पचास प्रकरणों में मानव को लक्ष्य करके दिये गये अनेक उपदेश 'नीति-निर्झर' में संकलित हुए हैं।

इस अद्‌भुत पुस्तक का चौथा संस्करण प्रकाशित करने में हमें गौरव का अनुभव हो रहा है। आशा है पाठक अन्य तीन संस्करणों की तरह इस चौथे संस्करण का भी स्वागत करेंगे।

—मन्त्री

ग्रन्थ का इतिहास

मूल ग्रन्थ के विषय में ऐसा कहना है कि ब्राह्मी भाषा तथा लिपि में लिखित इस ग्रन्थ की हस्तलिपि तिब्बत के लासा-प्रदेश के 'पोन्ताला' पर्वत-शिखर पर स्थित विशाल ग्रन्थागार से प्राप्त हुई।

सन् १७५१ में 'दि इकॉनामी आफ ह्यूमन लाइफ' नाम से सबसे पहले अंग्रेजी में इसका अनुवाद किया गया। पुस्तक खूब चली और सन् १८१२ तक उसके पचास संस्करण निकल गये। फ्रेंच, जर्मन, इटालियन तथा वेल्स भाषाओं में इसके अनुवाद हुए।

इस ग्रन्थ के सम्बन्ध में एक और कथा प्रसिद्ध है। तिब्बत के विशाल मन्दिरों (पैगोडा) के ग्रन्थागारों में आज भी अनेक अप्रकाशित ग्रन्थ-रत्न पड़े हैं। चीन के तत्कालीन विद्वान् विचारकों का भी ध्यान इस ओर गया और उन्होंने प्राचीन भाषाओं एवं लिपियों के ज्ञाता तथा गम्भीर उच्च विचारक पचास वर्षीय प्रभावशाली वक्ता काउत्सौ को उनका पता लगाने और प्राप्त करने के लिए चुना। चीन के तत्कालीन सम्राट् ने उसे 'को लो आ' (प्रधानमंत्री) की सम्मानित उपाधि से अलंकृत किया और लामाओं के अमूल्य साहित्य को लुप्त होने से बचाने की सदिच्छा से उनके नाम विनयपूर्ण पत्र देकर वहाँ भेजा। विद्वान् मंत्री छह मास तक वहाँ रहा। अनेक बहुमूल्य लेखों का पता लगा। उसे सबसे प्राचीन लेख जो मिला, वह थी एक छोटी-सी पद्धति, जो प्राचीन जिमनासोफिस्ट या ब्राह्मी भाषा-लिपि में लिखी थी। उस पर किसी की कोई व्याख्या नहीं थी। लामाओं द्वारा उसे समझना भी कठिन था। विद्वान् काउत्सौ ने उसका चीनी भाषा में सम्पूर्ण अनुवाद कर लिया, यद्यपि उसने स्वयं स्वीकार किया कि "मैं मूल ग्रन्थ की पुष्टता और गौरव को चीनी भाषा में उद्धृत करने में पूर्ण रूप से असमर्थ रहा।"

यद्यपि इस ग्रन्थ के लेखक का नाम अब तक ज्ञात नहीं हो सका, फिर भी ग्रन्थ में पाये जानेवाले विशिष्ट चिह्नों, हस्तलिपि एवं भावों के अन्तःसाक्ष्य पर अंग्रेज अनुवादक कहता है कि "यह किसी प्राचीन ब्राह्मण की, 'ब्राह्मण डण्डामिस' की रचना है, जिसके द्वारा सिकन्दर महान् को लिखे गये प्रसिद्ध पत्र का उल्लेख यूरोपीय विद्वानों ने किया है। स्वयं काउत्सौ भी इस मन्तव्य से सहमत था। कम-से-कम उसे इतना तो पूर्ण विश्वास दीखता है कि "जिस भाव से यह लिखा गया है, उसके कारण यह कोई अनुवाद नहीं, मूल ग्रन्थ ही है।" कुछ लोग इसे 'कन्फ्यूशियस' या उसके समकालीन ताओसी-सम्प्रदाय के संस्थापक 'लाओ किउन' की रचना बताते हैं।

जो हो, इस तरह लेखक के नाम का निश्चय न होना कोई अनुचित बात नहीं। पूज्य विनोबा अक्सर कहा करते हैं कि "मनुष्य का नाम भी मिट जाय, यह सर्वोत्कृष्ट स्थिति है।"

'दि इकॉनामी आफ ह्यूमन लाइफ' का अनुवाद 'हदीक तुल अखलाक' नाम से उर्दू में मुंशी प्यारेलाल शाकिर (मेरठी) ने सन् १९१३ में किया, जिसका यह हिन्दी रूपान्तर 'नीति-निर्झर' के रूप में प्रकाशित किया जा रहा है। 'तनजीम-उल हयात' नाम से पद्यात्मक और 'निजामे हयाते इन्सानी' नाम से गद्यात्मक दो अन्य उर्दू अनुवाद भी इसके हो चुके हैं।

इस प्रकार 'नीति-निर्झर' की कहानी बड़ी अजीबोगरीब है। पचास प्रकरणों में विभक्त इस ग्रन्थ में मानव को लक्ष्य कर अनेक व्यावहारिक एवं आध्यात्मिक उपदेश संकलित हैं, जो बहुमूल्य तथा दूरदर्शितापूर्ण हैं। यही कारण है कि पूर्व-पश्चिम की अनेक भाषाओं के सुविज्ञ विचारकों ने अपनी-अपनी भाषाओं में ससम्मान इस ग्रन्थ को स्थान दिया है।

इस हिन्दी रूपान्तर द्वारा जनाब मंजूरुल हसन साहब ने राष्ट्रभाषा-भाषियों के लिए ग्रन्थरत्न सुलभ कर बहुत उपयोगी काम किया है। यही है इस अनमोल ग्रन्थ-रत्न का इतिहास।

"आरंभ अल्लाह के नाम से, जो बार-बार रहम करनेवाला है"

अनुवादक की ओर से

प्रस्तुत पुस्तक 'दि इकॉनॉमी ऑफ ह्यूमन लाइफ' नामक एक ही पुस्तक के दो उर्दू अनुवादों—१. 'हदीक़तुल अख़लाक़' और २. 'निज़ामे हयाते इन्सानी'—का हिन्दी अनुवाद है। अंग्रेजी पुस्तक भी अनुवाद ही है, मूल नहीं। इस पुस्तक की अपनी एक कहानी है। कहानी अधूरी न रह जाय, इसी खयाल से अपनी ओर से कुछ न लिखने के फैसले के खिलाफ यह लिख रहा हूँ।

शायद सन् १९४६ बीतने ही वाला था, जब इस पुस्तक के उर्दू अनुवाद (हदीक़तुल अख़लाक़) की प्रस्तावना, उर्दू की एक पाठ्य-पुस्तक में, प्रूफ रीडिंग के समय सामने आयी। पुस्तक के कई भाग थे। संकलनकर्ता ने प्रत्येक भाग में दो-एक अध्याय उसके दिये थे। उन्हें पढ़कर पूरी पुस्तक के अध्ययन की उत्कण्ठा हुई। किताब सन् १९५३ तक नहीं मिली। बीच में जब-तब याद आती, लाइब्रेरियाँ, बुक्सेलरों और मित्रों से पूछताछ करता रहा। सन् १९५३ में लखनऊ के अलभ्य पुस्तकों का व्यापार करनेवाले एक बुक्सेलर के यहाँ मेरे छोटे भाई को पुस्तक मिल ही गयी। पुस्तक के प्रति मेरी असीम उत्कण्ठा से वे परिचित थे। पुस्तक पाकर मुझे जो खुशी हुई, वह वर्णनातीत है। पुस्तक मैंने जमकर पढ़ी और स्वभाववश अपने प्रत्येक मित्र को पढ़वा भी दी। सबने पसंद की और ऐसी अनूठी सामग्री पढ़ने के लिए ढूँढ़ निकालने पर भरपूर धन्यवाद भी दिये। एक मित्र, जो एक धार्मिक पत्र के संपादक हैं, ऐसे लट्टू हुए कि मेरे पड़ोस में होते हुए भी—जब चाहते पुस्तक ले सकते थे—एक नकल करायी और अपने पास सँभालकर रख ली। बाद में क्रमशः उन्होंने अपने मासिक पत्र में उसे छाप भी दिया।

इस बीच पुस्तक को मैं कई बार पढ़ चुका था। अनुवाद में उच्चकोटि की मूल रचना जैसा जोर, हृदय को छूनेवाली शैली, विभिन्न स्थानों पर मानवीय ज्ञान से ऊँची बातें और विशेषकर प्रस्तावना ('मूल' पुस्तक की) ने पुस्तक से मेरी दिलचस्पी को श्रद्धा में बदल दिया। मुझे बार-बार 'क़ुरान शरीफ़' के इन वाक्यों की याद आयी :

"....और कोई कौम (ऐसी) नहीं है, जिसमें (ईश्वरीय) पथ-प्रदर्शक न हुआ हो।...."

"....और हमने हर उम्मत में रसूल (संदेष्टा) भेजे।...."

तो, क्या यह किसी ईश्वरीय पथ-प्रदर्शक रसूल का सहीफ़ा है? यह प्रश्न वार-वार मेरे मन में उठा और अव भी उठता है। इसका निश्चित उत्तर आज तक तो नहीं ही मिला, आगे भी आशा नहीं है। पर इससे इतना अवश्य हुआ कि हमारी श्रद्धा वढ़ती-वढ़ते अपने अन्तिम सिरे तक पहुँच गयी और वहीं से उसके हिन्दी अनुवाद की प्रेरण भी मिली। मेरी श्रद्धा पर इस विचार से चोट पहुँचने लगी कि ऐसी अमूल्य निधि, जिससे यूरोप की प्रत्येक भाषा ने अपने को मालामाल किया, भारतीय भाषाओं के काम न आये। ऐसी दशा में, जव वह हो भी वड़ी हद तक अपनी ही!

अनुवाद का काम वैसे भी सहज नहीं, पर उसे मेरे उपर्युक्त उत्तर-विहीन प्रश्न ने और मुश्किल वना दिया। कारण, किसी 'सही.फे' का भावार्थ पेश करना वड़ी हद तक उसके शब्दों को अपनी भावनाओं के पात्र में उपस्थित करना ही है। अपनी अपात्रता का ज्ञान मुझे वैसे दु:साहस के लिए उद्यत नहीं कर सकता था। हाँ, प्रश्न यह अवश्य था कि क्या स्व० श्री प्यारेलाल शाकिर का अनुवाद वैसे ही साहस पर आधृत है? अनुवाद चल रहा था और साथ ही अन्तःकरण में द्वन्द्व भी। कभी द्वन्द्व अधिक वढ़ जाता और अनुवाद की पवित्रता पर सन्देह का भाव गहरा हो जाता, तो काम रुक भी जाता। इतना ही नहीं, कहीं-कहीं प्रूफ की गलतियाँ भी जान पड़ीं और कई स्थान वुरी तरह उलझे हुए भी थे।

उपर्युक्त मुश्किलों से पार पाने का उपाय इसके अतिरिक्त और क्या था कि अंग्रेजी पुस्तक भी मिले। पर कहाँ? तलाश के आम साधनों के अतिरिक्त श्री 'शाकिर' की अंग्रेजी प्रस्तावना की कई प्रतियाँ टाइप कराकर मैंने जहाँ-तहाँ अपने मित्रों और वुकसेलरों को भेजीं।

तभी सर्व-सेवा-संघ के श्रीकृष्णदत्त भट्ट से पता चला कि ऐसी ही एक अलभ्य पुस्तक उन्हें भी प्राप्त हुई है। वस, न पूछिये इस सूचना से मुझ पर क्या वीती! अपना परिश्रम वेकार होता दीख पड़ा, सो अलग; असीम दु:ख इस कल्पना से होने लगा कि ऐसी अनमोल निधि को हिन्दी को उपहार देने का पुण्य—अधिक सत्य यह कि श्रेय—मुझे न मिल सकेगा। मैंने विना किसी इन्तजार के अनुवाद का पुलिन्दा भट्टजी को भेज दिया। महीनों वाद यह सूचना मिली कि वह पुस्तक इससे भिन्न है और इसे तो संघ छपवाने की इच्छा रखता है। आदेश मिला कि छूटे हुए स्थलों को पूरा करो। फिर क्या था, मैं उन गुत्थियों को सुलझाने में जुट गया, जिन्हें उपर्युक्त कारणों से छोड़ दिया था।

इस वीच एक सज्जन ने सूचित किया कि लाहौर के उर्दू मासिक 'नोकूश' में 'आपकी पुस्तक' पर श्री केसरा मिनहास का एक लेख छपा है, साथ ही उन्होंने वह पत्र भी लाकर दे दिया। वह लेख इसी पुस्तक के एक अन्य अनुवाद, जिसका मुझे पता नहीं था, की समालोचना का था। अनुवाद उर्दू के प्रसिद्ध शायर मौलाना 'सफी लखनवी' ने 'हदीक़ तुल अखलाक़' के आधार पर 'तन्जीमे हयात' के नाम से पद्य में किया है।

श्री केसरा मिनहास ने एक और अनुवाद का भी जिक्र किया था, जिसे 'निज़ामे हयाते इन्सानी' के नाम से श्री बाबू दन्सीलाल सिंह ने गद्य में किया था। सबसे बड़ी काम की बात लेखक ने यह की थी कि तीनों अनुवादों की आलोचना करते हुए 'मूल' अंग्रेजी से कुछ पंक्तियाँ भी नकल कर दी थीं, जिससे मेरे इस सन्देह की पुष्टि हो गयी कि श्री 'शाकिर' का अनुवाद भावार्थ पर आधृत है। दूसरा अनुवाद अंग्रेजी के काफी निकट और ठीक-ठीक दीख पड़ा। अब मैंने एक ओर तो 'निज़ामे हयाते इन्सानी' प्राप्त की, दूसरी ओर श्री केसरा मनहास को अंग्रेजी पुस्तक की प्राप्ति की सम्भावना के लिए पत्र लिखा। उनका जो उत्तर आया, वह अधिक उत्साहवर्धक नहीं था। उन्होंने लिखा कि मैंने अंग्रेजी पुस्तक की एक प्रति मौ० 'सफी' मरहूम के यहाँ देखी थी, उसीसे नोट्स लिये थे। अब उनके बाद वह कहाँ होगी, कह नहीं सकता। इन पाकिस्तानी सज्जन ने बिना पूर्व परिचय के भी मेरे सहायतार्थ उनके पौत्र को पत्र लिखा, किन्तु उसका कोई उत्तर नहीं मिला।

मैंने अपना अनुवाद 'निज़ामे हयाते इन्सानी' के द्वारा ठीक कर लिया। प्रूफ की गलतियाँ भी सामने आयीं और अध्यायों के क्रम में उलट-फेर भी। कई जगह छूट थी। एक अध्याय तो अपने शीर्षक से बिछुड़कर दूसरे में जा मिला था। इसमें सन्देह नहीं कि यह दूसरा अनुवाद मुझे न मिलता, तो पुस्तक त्रुटिपूर्ण तो होती ही, साथ ही इसे आप स्व० श्री 'शाकिर' की भावनाओं—एकाध स्थान पर उनके धार्मिक विश्वासों—से ओत-प्रोत पाते, जिसका पता न मुझे चलता और न आपको।

पुस्तक को मैं 'निज़ामे हयाते इन्सानी' की तरह विभिन्न खण्डों में बाँटकर शीर्षकों को उसी क्रम से रखना चाहता था, पर ऐसा समय पर सूचित न हो सकने के कारण न कर सका। अनुक्रम 'हदीक़ तुल अखलाक़' जैसा ही है।

अंतिम बात यह कि 'मूल' अंग्रेजी पुस्तक में हम सबकी दिलचस्पी है। हम सब खोज रहे हैं। कृपालु पाठक भी तलाश करें और मिलने पर सूचित करें।

अखिल भारत सर्व सेवा संघ प्रकाशन से यह रचना 'नीति-निर्झर' के नाम से प्रकाशित हो रही है। सर्व-सेवा-संघ के प्रति मैं हृदय से कृतज्ञ हूँ।

काशी
२१-३-'६२

—मंजूरुल हसन

अनुक्रम

वह सिरजनहार | १

हे धरती पर रहनेवालो, विनय की पृष्ठभूमि पर नतमस्तक और समाधिस्थ होकर ईश्वर की अनुकम्पा प्राप्त करो।

जहाँ सूर्य का प्रकाश पहुँचता है, जहाँ हवा चलती है, जहाँ देखनेवाले नेत्र और सुननेवाले कान सुलभ हैं, वहीं जीवन के पुनीत धर्म को प्रचारित करो, मूलभूत सिद्धान्तों पर आचरण करो और सातत्ययोग की साधना का प्रयत्न करो।

सारी सृष्टि का सिरजनहार परमेश्वर है। उसकी सामर्थ्य असीम है, उसकी बुद्धि अनन्त है और उसका पुण्य अविनाशी है। वह समस्त सृष्टि में शोभायमान है और वही सबका जीवन है।

वह नक्षत्रों को गति देता है, जिससे वे अपनी कक्षाओं में प्रसन्न और हर्षित होकर घूमते रहते हैं। वह सर्वत्र उपस्थित है और सब कुछ देखता है; जो कुछ चाहता है, अपनी पुनीत इच्छा के अनुसार करता है।

सामंजस्य, सौन्दर्य और कौशल्य, सब उसीके व्यक्तित्व से हैं। सृष्टि उसकी बुद्धिमत्ता की द्योतक है, किन्तु मनुष्य का ज्ञान उसकी अनुभूति करने में असमर्थ है।

अनेक वस्तुओं का ज्ञान मनुष्य के लिए स्वप्न जैसी स्थिति लाता है। मानो वह अन्धकार में देखता और प्रमाण तथा दलील उपस्थित करता है, किन्तु अन्त में विवश हो जाता है।

आकाश की ज्योति ईश्वरीय बुद्धिमत्ता का प्रतीक है। उसको सिद्ध करने के लिए किसी प्रकार के प्रमाण और दलील की आवश्यकता नहीं। उसका मानस सत्य का स्रोत है।

दया और न्याय सदा उसके साथ हैं। प्रेम के कारण उसका मुखमण्डल सदा आलोकमय रहता है।

भला कौन उस दयासिन्धु परमेश्वर के वैभव और प्रताप की बराबरी कर सकता है? कौन उस सर्वाधिकारिणी शक्ति का मुकाबला कर सकता है? बुद्धिमत्ता में कोई उसके समकक्ष नहीं और शील में कोई उसके सदृश नहीं है।

मानव ! तुझे उसने उत्पन्न किया । उसीकी आज्ञा से तू संसार में आया है । तेरे मानस की शक्ति उसीका अनुदान है और तेरा शरीररूप अद्भुतालय उसी सुविज्ञ कलाकार की कलाकारी का साधारण नमूना है ।

हे मनुज ! उसकी वाणी पर ध्यान दे । जो व्यक्ति उसकी आज्ञा का पालन करता है, उसीकी आत्मा अनन्त आनन्द प्राप्त करती है ।

२ | ईश्वर और धर्म

परमेश्वर अद्वय है । कोई उसका साझीदार नहीं । वह संसार का सर्जक, धरती और आकाश का शासक है । वह प्रत्येक वस्तु पर प्रभुत्व रखनेवाला तथा अविनाशी है । वह बुद्धि, विवेक और कल्पना से वाहर है । उसका नाम वन्दनीय है !

सूर्य चन्द्र ही नहीं, आकाश भी उसकी सामर्थ्य का सुन्दर उदाहरण है । उससे पूरी सृष्टि को प्रकाश और गर्मी मिलती है । तू परमेश्वर की उस कला को आदर की दृष्टि से देख, पर उसकी पूजा मत कर ।

पूजा और वन्दना केवल उसी एक ईश्वर के लिए उचित है, जो अनन्त बुद्धि-विवेकवाला, दया और करुणा का उद्गम और पुण्य का स्रोत है ।

उसने अपने हाथ से आकाश को ऊँचा उठाया और ग्रहों के पथ निश्चित किये ।

उसकी आज्ञा से सृष्टि की रचना होती है, उसीकी आज्ञा से वह व्यवस्थित है और उसीकी आज्ञा से मिट जाती है ।

समुद्रों की सीमाएँ उसीने नियत कर दी हैं कि उससे आगे न बढ़ने पायें । हवा को वही रोक देता है ।

भूचाल उसीकी आज्ञा से होता है, जिससे संसार के प्राणी काँप उठते हैं । वही विजली को चमकाता है, जिसे देखकर पापी थर्राने लगते हैं । उस एकमात्र प्रभु की महिमा और महत्ता का आदर कर । उसके क्रोध को मत भड़का । कहीं ऐसा न हो कि तू तहस-नहस होकर अस्तित्व-विहीन हो जाय ।

परमेश्वर अपनी सम्पूर्ण सृष्टि का अन्नदाता है । अनन्त बुद्धि से वह सवका पथ-प्रदर्शन करता है और सब पर शासन करता है ।

उसने सम्पूर्ण सृष्टि की व्यवस्था के लिए कानून वनाये हैं, जो आवश्यकता के अनुसार हैं। प्रत्येक वस्तु उसीकी पवित्र इच्छा के अनुसार काम करती है। वह सभी वातों को जानता है। जो वातें आगे होनेवाली हैं, वे भी उसे ज्ञात हैं।

तेरे दिल के भेद भी उससे छिपे नहीं हैं। वह तेरे सभी संकल्पों को, इससे पूर्व कि वे तेरे मानस-पट पर अंकित हों, जान लेता है।

वह सभी वातों को पहले से ही जान लेता है। न तो उसके सम्मुख कोई विषय अनिवार्य है और न उसकी कार्यपटुता के सम्मुख कोई काम संयोगवश हो सकता है।

उसकी रीति और पद्धति अत्यन्त निराली और आश्चर्यजनक है। उसका आयोजन मनुष्य की पहुँच से वाहर है। उसकी पद्धति को तेरी वुद्धि कदापि नहीं पकड़ सकती।

उसकी वुद्धि सम्मान और प्रतिष्ठा के योग्य है। उसके निर्देश को आदर और नम्रता के साथ स्वीकार कर।

ईश्वर दयालु और करुणामय है। उसने ममता और दया से सृष्टि की रचना की है। सारी सृष्टि में उसका पुण्य प्रकाशित हो रहा है। वह गुण का उद्गम और कौशल का केन्द्र है।

सृष्टि उसके पुण्य को प्रकट करती है। सभी प्राणी उसकी वन्दना और प्रशंसा करते हैं। वह उन्हें सौन्दर्य और आहार प्रदान करता है और वही वंशानुगत ममतापूर्ण संरक्षण के साथ स्थिर रखता है।

यदि हम आँख उठाकर आकाश की ओर देखें, तो उसका तेज दीख पड़ेगा और यदि पृथ्वी की ओर दृष्टि डालें, तो चारों ओर उसकी करुणा सहज ही दिखाई देगी।

पर्वत और घाटियाँ आनन्द के गीत गाती हैं। नदियाँ और जंगल तथा खेत उसकी वन्दना से ओतप्रोत हैं।

किन्तु हे मनुष्य! उसने तुझ पर विशेष दया और कृपा की है, तुझे सभी प्राणियों में श्रेष्ठ स्थान दिया है।

उसने तुझे वुद्धि और विवेक प्रदान किया है कि तू अपनी व्यवस्था कर सके। उसने तुझे ज़वान–वाणी प्रदान की कि तू वातचीत द्वारा अपना उद्देश्य प्रकट कर उन्नति करे। उसने तेरे हृदय में विवेक-शक्ति दी कि तू उसके कौशल पर उचित रीति से विचार कर सके।

उसने तेरे जीवन के पथ-प्रदर्शन के लिए ऐसे विधान वनाये कि तेरे स्वधर्म तेरे स्वभाव के अनुकूल हों। उसकी आज्ञाओं का विनम्र पालन ही तेरी वास्तविक प्रसन्नता का कारण होगा।

उसके पुण्य के वन्दनास्वरूप धन्यवाद के गीत गा और खामोशी के साथ उसके प्रेम के अनूठेपन पर विचार कर। अपने हृदय में कृतज्ञता का वेग पैदा कर तथा जवान से उसकी वन्दना तथा पूजा कर। ऐसा कर कि तेरे व्यवहार से जान पड़े कि उसके कानून की पावन्दी तुझे प्रिय है।

ईश्वर न्याय करनेवाला तथा सत्यवादी है। वह बिना पक्षपात के संसार का न्याय करेगा।

उसके कानून की आधार-शिला पुण्य तथा करुणा है। क्या कानून के विरुद्ध चलनेवालों को वह दण्ड न देगा?

हे मनुष्य! यदि दण्ड में विलम्ब हो, तो कदापि न सोच कि ईश्वर का हाथ कमजोर है और न इस बात पर प्रसन्न हो कि तेरे पापों की ओर से उसकी आँखें बन्द हैं।

उसकी आँखें मन के सभी भेदों को देखती हैं। वह सदा उन्हें याद रखता है। मनुष्य की जाति तथा ऊँच-नीच पर विचार नहीं करता।

ईश्वर अमीर-गरीब, ऊँच-नीच, पण्डित-मूर्ख सभी को उनके कर्मों के अनुसार फल देगा। यह उस समय होगा, जब आत्मा इस मिट्टी की देह को छोड़ देगी।

तो, जब तक तू जीवित है, ईश्वर से डरता रह और जो रास्ते उसने नियत कर दिये हैं, उनका अतिक्रमण न कर। सदा दूरदर्शिता से काम ले। संयमी वनकर अपनी इच्छाओं को दवाये रख। न्याय को सदा अपना पथ-प्रदर्शक वना। पुण्य से मन को गरम रख और कृतज्ञता के उद्‌गार से अपने स्रष्टा की पूजा और स्तुति कर। यदि तू ऐसा करेगा, तो विश्वास रख, जीवनभर प्रसन्न रहेगा और जब इस संसार से उठ जायगा, तो तुझे वैकुण्ठ में अनन्त सुख प्राप्त होगा। ●

३ | मनुष्य की दैहिक कला

हे मनुष्य! तू कमजोर और मूर्ख है। अरे मिट्टी के पुतले, तू अत्यन्त तुच्छ है। क्या उस अथाह बुद्धिमत्ता तक तेरा विचार पहुँच सकता है? यदि तू उस सर्वशक्तिमान् की प्रभुता का परीक्षण करना चाहता है, तो अपने ही शरीर का विचार कर।

तेरे शरीर की वनावट कैसी अद्‌भुत है! अपने जन्मदाता की स्तुति कर तथा आदर के साथ खुशी मना।

क्या तू जानता है कि सारी सृष्टि में तू ही क्यों ऐसा बनाया गया ? केवल इसलिए कि तू उसकी कला देखे और देखकर विस्मित हो और इस तरह अपने प्रभु की उपासना करे।

तुझे बुद्धि और चेतना क्यों दी गयी ? प्रज्ञा और विवेक तुझे क्यों दिये गये ? कहाँ से वे तुझे मिले ?

मांस में विचार करने की शक्ति नहीं है और हड्डियों में विवेक की सामर्थ्य। शेर नहीं जानता कि एक दिन वह कीड़े-मकोड़ों का आहार बनेगा और न बैल को यह पता है कि बधियाने के लिए उसे मोटा किया जा रहा है। तुझे एक ऐसी वस्तु दी गयी है, जिसे तू नहीं देख सकता। तेरे पास एक ऐसी चीज मौजूद है, जो इन्द्रियों से श्रेष्ठतम है। क्या तू बता सकता है कि वह वस्तु क्या है ?

जब वह शरीर छोड़कर चली जाती है, तो शरीर ज्यों-का-त्यों बना रहता है; अतः उसे शरीर का अंश नहीं कहा जा सकता। चूंकि वह शरीर नहीं रखती, इसलिए अमर है। वह कर्ता है, अतः अपने कर्मों की स्वयं उत्तरदायी है।

क्या गधा आहार का उचित प्रयोग जानता है ? वह भी तो तेरी तरह दांत रखता है। क्या मगरमच्छ सीधा खड़ा हो सकता है ? उसकी पीठ की हड्डी (रीढ़) भी तो तेरी ही तरह है !

तेरी ही तरह ईश्वर ने उन्हें भी पैदा किया है। किन्तु सबके पश्चात् तू पैदा किया गया है। तू सारी सृष्टि में सभी प्राणियों से श्रेष्ठ है। तुझे उन पर श्रेष्ठता प्राप्त है। ईश्वर ने अपनी आत्मा से सत्य और ज्ञान का नियम तेरे नथुनों में फूंका है।

तू अपने-आपको उसकी सृष्टि का मुकुट और आत्मा तथा भूत के बीच जुड़ने-वाली कड़ी समझ। अपने ही शरीर में ईश्वरीय कला का दर्शन कर; बल्कि यह भी याद रख कि वह सदा तेरे साथ है। अपने इस स्थान का सदा ध्यान रख। सावधान ! नीचता और कुकर्म तुझसे न होने पायें।

वह कौन है, जिसने सांप के मुख में विष और घोड़े में जोरदार आवाज पैदा की ? उसी स्रष्टा ने तुझे प्रेरित किया है कि एक को अपनी एड़ी से कुचल और दूसरे को सवारी के लिए सधा।

आत्मा का उद्देश्य

इस बात पर घमण्ड मत कर कि पहले तेरा शरीर बनाया गया और न अपने मस्तिष्क पर ही घमण्ड कर कि आत्मा इसमें निवास करती है। क्या मकान की दीवारों की तुलना में मकान-मालिक अधिक प्रतिष्ठा और आदर के योग्य नहीं ?

खेत में बीज बोने से पहले जमीन का सुधार आवश्यक है। कुम्हार का कर्तव्य है कि बर्तन बनाने से पहले आवें को ठीक करे।

जिस तरह ईश्वर समुद्र का पानी अपने आदेश में रखता है कि लहरें अपनी सीमा से आगे नहीं बढ़ने पातीं, उसी तरह हे मनुष्य ! तू अपने शरीर को अपनी आत्मा के निर्देश में रख। अंकुशहीन इन्द्रियों को विकृति की ओर अग्रसर होने से अपनी आत्मा द्वारा नियन्त्रित कर।

तेरी आत्मा तेरे शरीर की मालिक है। अतः प्रयत्न कर कि प्रजा अपने राजा से बागी न हो।

तेरा शरीर धरातल के समान है तथा तेरी हड्डियाँ स्तम्भ-सदृश हैं, जिन पर वह स्थिर है।

जिस प्रकार बादल समुद्र से पानी ले जाकर बरसते हैं और वही पानी नदियों द्वारा फिर समुद्र में पहुँच जाता है; उसी प्रकार तेरे मन से जीवन-स्रोत, खून प्रवाहित होकर सारे शरीर में फैलता और फिर हृदय में आ जाता है।

क्या दोनों की यह गति सदैव नहीं रहती ? देख, ईश्वर ने यही आदेश दिया है।

तेरे नथुने सुगन्ध सूँघने के लिए और ज़बान-जीभ स्वाद चखने के लिए है। किन्तु याद रख, जो सुगन्ध बार-बार सूँघी जाय या जो आहार निरन्तर ग्रहण किया जाय, वह अप्रिय हो जाता है।

तेरी आँखें तेरे लिए चौकीदार का काम देती हैं। फिर भी कभी-कभी वे उचित और अनुचित में भेद नहीं करतीं।

अपनी आत्मा को संयम में रख। अपने स्वभाव को उसके कल्याण के लिए शिक्षित कर। वैसी दशा में वे तुझे सत्य की ओर ले जानेवाले होंगे।

क्या तेरा हाथ चमत्कार नहीं? कौन-सी ऐसी वस्तु सृष्टि में है, जो उसकी बराबरी कर सके? यह तुझे क्यों दिया गया है? केवल इसलिए कि तू उन्हें अपने भाई की सहायता के लिए फैलाये।

तेरी प्रकृति में लज्जा और संकोच का सम्मिश्रण क्यों है? इसलिए कि संसार तेरे मुख-मण्डल से तेरी लज्जा को जान ले। सावधान! कोई ऐसा काम न कर, जिससे तुझे लज्जा उठानी पड़े।

भय और विकलता के समय तेरे मुख-मण्डल की ज्योति क्यों नष्ट हो जाती है? यदि तू कुकर्म और पाप से घृणा करे, तो तुझे किसी प्रकार का भय नहीं होगा। याद रख, घबराना मर्दों का काम नहीं।

इसका क्या कारण है कि केवल तुझे ही स्वप्न में छाया दीख पड़ती है? इसका आदर कर और याद रख, स्वप्न ईश्वर की ओर से होते हैं।

हे मनुष्य! वाक्-शक्ति का प्रसाद केवल तुझे ही दिया गया है। प्रसन्न हो कि इतना बड़ा अधिकार तुझे सौंपा गया है। अतः अपने करुणामय स्रष्टा की वन्दना और स्तुति कर और अपनी सन्तान को बुद्धि, नीति और ईमानदारी की शिक्षा दे। ●

आत्मा की वास्तविकता

हे मनुष्य! तेरे शरीर के वाह्य भाग के लिए स्वास्थ्य, बल, सुन्दरता आदि प्रसाद हैं। इन सबमें स्वास्थ्य श्रेष्ठ और उच्च है। जिस प्रकार शरीर के लिए आरोग्य आवश्यक है, उसी प्रकार आत्मा के लिए सत्य आवश्यक है।

यह विषय असन्दिग्ध और प्रमाणित तथा सभी सचाइयों से अधिक स्पष्ट है कि तू आत्मायुक्त है। तू कृतज्ञतापूर्वक उसके प्रति अपना अज्ञान प्रकट कर। पूर्ण रूप से उसकी वास्तविकता जानने की चिन्ता न कर। वह तेरी बुद्धि और विवेक से ऊँची है।

ध्यान, बुद्धि, स्मरण, वासना, विचार—इनमें से कोई वस्तु आत्मा नहीं। ये उसके कार्य हैं, स्वरूप नहीं।

मर्यादा से अधिक उसे ऊँचा न कर, कहीं तू नीचा न हो जाय! तू उन उछलने-कूदनेवालों की भाँति मत बन, जो गिर पड़ते हैं। पशुओं की आत्मा की भाँति उसे हीन न कर, कहीं तू घोड़े-गदहे की तरह न बन जाय, जिनमें तनिक भी बुद्धि-विवेक नहीं होता।

आत्मा की, उसकी विशेषताओं तथा भूतों के माध्यम से खोज कर। उसके गुणों द्वारा उसकी खोज कर। कौन से गुण ? वे ही गुण, जो गिनती में तेरे सिर के बालों और आकाश के तारों से भी अधिक हैं।

अरबवालों की तरह तू यह विचार कदापि न कर कि एक ही आत्मा सारे मनुष्यों में है और न मिस्रवालों की तरह इस बात पर विश्वास रख कि एक-एक मनुष्य के लिए कई-कई आत्माएँ होती हैं*। समझ ले—जिस प्रकार तेरे शरीर में एक हृदय है, उसी प्रकार आत्मा भी एक ही है।

तूने देखा होगा कि सूर्य की गर्मी से मिट्टी कठोर और मोम नर्म हो जाता है। अतः जब एक ही सूर्य परस्पर-विरोधी ये दो काम कर सकता है, तो आत्मा भी दो प्रतिकूल बातों की इच्छा कर सकती है।

जब बादल चाँद को छिपा लेते हैं, तो चाँद का गुण उससे नहीं छिन जाता। इसी प्रकार सर्वगुणसम्पन्न आत्मा मूर्ख के सीने में भी सुरक्षित रहती है।

शरीर के नष्ट-भ्रष्ट हो जाने पर भी आत्मा का नाश नहीं होता। वह कभी परिवर्तित नहीं होती। हर दशा में एक-सी रहती है। आरोग्य उसके सौन्दर्य को और श्रम उसकी बुद्धि को चमकाता है।

न्याय (सिन्धु) तुझे निर्गुण आत्मा नहीं दे सकता और न करुणा (निधि) द्वारा उसे ऐसे मार्ग पर लगाया जा सकता है, जिससे वह दोषपूर्ण और विकृत हो। यह तेरी करनी है। तू उसके लिए उत्तरदायी है।

इस विचार को कदापि मन में न आने दे कि मृत्यु तुझे उत्तरदायित्व से और रिश्वत पूछताछ से बचा लेगी। स्रष्टा ने तुझे किस चीज से बनाया, इसकी अनुभूति तू नहीं कर सकता, तो क्या वह वर्तमान दशा से किसी ऐसे पद पर तुझे प्रतिष्ठित नहीं कर सकता, जो तेरी कल्पना से परे हो ?

क्या मुर्गा नहीं जान लेता कि अब आधी रात है ? क्या वह बाँग देकर तुझे सुबह हो जाने की सूचना नहीं देता ? क्या कुत्ता अपने मालिक के पद-चिह्न नहीं पहचानता ? क्या आहत बकरी उसी बूटी से अपना शरीर नहीं रगड़ती, जिसको वह स्वास्थ्यकर जानती है ? किन्तु वे सब मरने के पश्चात् मिट्टी में मिल जाते हैं। केवल तेरी ही आत्मा जीवित रहती है।

उनकी कुछ विशेषताओं के प्रति ईर्ष्या मत कर कि वे तुझसे अधिक गुणसम्पन्न हैं। याद रख, अच्छी वस्तुएँ प्राप्त कर लेना ही हितकर नहीं है, बल्कि हित इसीमें है कि उनके प्रयोग का उचित अवसर और स्थान जाना जाय।

---

* अरबों और मिस्रवालों के ये विश्वास इसलाम से पूर्व थे।

क्या तेरे कान हिरन के कान की भाँति खड़े और तेरी आँखें गरुड़ की तरह तेज हो जायें ? क्या तेरी सूँघने की शक्ति भी शिकारी कुत्तों जैसी हो जाय ? क्या तेरी स्वाद-शक्ति बन्दर की भाँति हो जाय ? क्या तुझमें भी कछुए की भाँति ज्ञान-शक्ति आ जाय ? क्या ये सब नष्ट-भ्रष्ट नहीं हो जाते ?

क्या इनमें से किसीको भी वाक्-शक्ति दी गयी है ? क्या इनमें से कोई तुझसे कह सकता है कि मैंने इस कारण यह काम किया ?

बुद्धिमान् के होंठ तिजोरी के पल्लों की भाँति हैं। ज्यों ही खुलते हैं, तेरे सम्मुख जवाहरात उँडेल देते हैं। उनके समयानुसारी शब्द अत्यन्त उचित और सुन्दर होते हैं। इनको ऐसा समझ, जैसे चाँदी की वस्तु में सुनहरे बेल-बूटे।

क्या तू अपनी आत्मा की वास्तविक प्रतिष्ठा को विचारसीमा से घेर सकता है ? इसकी प्रशंसा सन्तुलित ढंग से की जाय, तो उसे अतिशयोक्ति ही समझा जायगा। जान रख, यह उस स्रष्टा का चित्र है। उसने तुझे वह दी है। इसके पद और मान को मत भूल। यह बहुत बड़ी अमानत है, जो तुझे सौंपी गयी है।

लाभ पहुँचानेवाली प्रत्येक वस्तु हानि भी कर सकती है। सावधान! अपनी आत्मा को सदा पुण्य की ओर आकृष्ट रख।

इस भ्रान्ति को मन से निकाल डाल कि तू इसे किसी विराट् जन-समूह में खो सकता है अथवा किसी पिंजड़े में बन्द रख सकता है। कार्य में लीन रहना इसकी प्रसन्नता है। बिना वृत्ति के यह रह नहीं सकती।

इसके कर्म में सातत्य है। इसके प्रयत्न भी निरन्तर हैं। इसकी स्फूर्ति कम नहीं की जा सकती।

कोई वस्तु संसार के किसी दूर देश में ही क्यों न हो, उसे भी यह खोज लेगी। जिस वस्तु तक ज्योतिष की भी पहुँच नहीं, इसकी तीव्र दृष्टि उसको भी जान लेगी।

अन्वेषण इसकी प्रसन्नता का कारण है। प्यासा व्यक्ति तपती हुई मरु-भूमि में भी पानी के लिए घूमता है, इसी प्रकार आत्मा को ज्ञान की विलक्षण प्यास रहती है।

आत्मा के हाल-चाल का संरक्षक बन; क्योंकि वह निरंकुश है। उसे अनुशासन में रख, क्योंकि वह नियमबद्ध नहीं है। उसके औचित्य का संरक्षण कर, इसलिए कि वह क्रोधी है। वह पानी से अधिक तरल, मोम से अधिक नर्म और हवा से ज्यादा हल्की है। फिर भला वह किस वस्तु से सम्बद्ध हो सकती है ? विवेकहीन की आत्मा ठीक वैसी है, जैसे पागल के हाथ में तलवार।

इसके अनुसन्धान और जिज्ञासा का फल सत्यता है और इसकी अनुभूति का माध्यम है, बुद्धि और अनुभव। किन्तु क्या ये सभी माध्यम अशक्त, नश्वर और भ्रम-मूलक नहीं ? फिर वह सत्य को कैसे प्राप्त कर सकती है ?

सर्वसाधारण की सम्मति से भी सत्य का प्रमाण मिलना कठिन है, क्योंकि वे प्रायः मूर्ख होते हैं।

क्या आत्म-परिचय, अपने स्रष्टा का ज्ञान और उसकी उपासना करने का विवेक तेरे सम्मुख नहीं ? क्या तेरी आत्मा ईश्वर से परिचित नहीं ? फिर वह कौन-सी ऐसी वस्तु है, जिसे जानने की मनुष्य को आवश्यकता है ?

जीवन-काल और उसका प्रयोग

जिस प्रकार पक्षियों को सुबह, उल्लू को शाम, मक्खी को शहद और गिद्ध को शव प्रिय है, उसी प्रकार मनुष्य को जीवन प्रिय है।

यद्यपि वह प्रकाशमान है, किन्तु आँखें चौंधिया नहीं जातीं। यद्यपि वह अन्धकारयुक्त है, किन्तु मन उससे नहीं घबराता। यद्यपि वह मीठा है, फिर भी उससे उकताहट नहीं होती। यद्यपि वह निकृष्ट है, किन्तु मन उससे घृणा नहीं करता। फिर भी कौन है, जो उसका पीछा नहीं करता ?

जीवन का उचित मूल्य आँकना सीख। यदि तू ऐसा करेगा, तो बुद्धि-स्तम्भ के निकट पहुँच जायगा।

तू मूर्खों के इस विचार को हृदयङ्गम मत कर कि जिन्दगी से बढ़कर कोई वस्तु आदरणीय नहीं है। कृत्रिम बुद्धिमान् की भाँति यह भी मत सोच कि तुझे जीवन से घृणा करनी चाहिए। केवल अपनी इन्द्रियों के लिए उससे प्रेम मत कर और न अपने निजी स्वार्थ के लिए उसकी लालसा कर। बल्कि इसलिए प्रेम कर कि वह दूसरों के कल्याण का माध्यम बने।

जीवन सोने से नहीं खरीदा जा सकता। रत्नों के ढेर उस क्षण को वापस नहीं ला सकते, जो बीत गया। इसलिए क्षण-क्षण को पुण्य में बिता। यह कदापि न कह कि "मैं जन्म ही न लेता या यदि जनमा, तो तुरन्त मर जाता !" अपने स्रटा से यह भी मत पूछ कि "यदि मुझे जन्म न देता, तो तेरी क्या हानि होती ? और पाप कैसे होता ?" पुण्य करना तेरे अधिकार में है। पुण्य का लोप ही पाप है। यदि तेरे प्रश्न को उचित समझ लिया जाय, तो भी तू प्रश्न करने की धृष्टता के कारण अपराधी ठहरता है।

यदि मछली यह जानती कि चारे में काँटा है, तो उसे क्यों निगलती ? शेर कदापि जाल में न फँसता, यदि वह जानता कि उसीको फँसाने के लिए वह बिछाया गया है। इसी प्रकार मनुष्य को कदापि जीवन से अभिरुचि न होती, यदि आत्मा भी शरीर के साथ ही नष्ट हो जाती और न दयानिधि परमेश्वर उसे पैदा ही करता। अच्छी तरह याद रख, शरीर के नष्ट होने के पश्चात् फिर तुझे जीवित होना पड़ेगा।

पिंजरे में बंद पक्षी अपने शरीर को नहीं बेधता, फिर तू क्यों अपनी वर्तमान दशा से निकलने का व्यर्थ प्रयत्न करता है। यह जान ले कि तेरे लिए भी यही निश्चित है। इसी पर संतोष कर। यद्यपि इसके मार्ग बीहड़ हैं, फिर भी सभी आशंकापूर्ण नहीं। इन्हींके अनुसार तू अपने को बैठा ले। जहाँ आशंका दीख पड़े, वहाँ अत्यधिक आशंका का भ्रम न किया कर।

जब तू घास पर अपना बिस्तर लगाता है, तो कितना आनन्द पाता है! किन्तु जब फूलों की सेज पर आराम करता है, तो काँटों से होशियार रहना तेरा फर्ज है।

बुरे जीवन से अच्छी मृत्यु कई गुना श्रेष्ठ है। आवश्यकता यह है कि तू भला जीवन बिताने की भरपूर चेष्टा कर। जिन्दगी के दिन केवल बिताने के लिए नहीं हैं। बल्कि जो तेरे फर्ज हैं, उन्हें पूरा करने के लिए जीवित रहने की चेष्टा कर। जब तक तेरी मृत्यु की तुलना में तेरा जीवन दूसरे के लिए उपयोगी हो, उसे सुरक्षित रखना तेरा धर्म है। मूर्खों की भाँति यह न कह कि समय कम है। याद रख, आयु के साथ तेरी चिन्ताएँ भी कम होती जाती हैं।

अपने जीवन का बेकार भाग निकाल डाल और शेष को देख। यदि तू अपने जीवन से बचपन, स्वप्न, बीमारी और बेकार रहने का समय अलग कर देगा, तो तुझे पता चलेगा कि कितने कम दिन बचते हैं। तब यह देख कि गिनती के कितने दिन तूने ठीक-ठीक बिताये हैं? जिसने तुझे जीवन का यह प्रसाद दिया है, उसीने इसे आदरणीय बनाने के लिए क्षणिक भी बनाया है। जीवन के दीर्घकालीन होने से क्या लाभ? क्या तू चाहता है कि कुकर्म का तुझे अधिक अवसर मिले? बाकी रहे सत्कर्म! तो क्या जिसने तेरे जीवन-काल को सीमित कर दिया है, वह सीमित सत्कर्म से सन्तुष्ट न होगा?

वत्स! दुःख-मुसीबत में अधिक दिनों तक जीवित रहकर तू क्या करेगा? क्या साँस लेने, खाने-पीने और सांसारिक लीला देखने के लिए तू दीर्घकालिक जीवन चाहता है? यह तो ऐसे कार्य हैं, जो अब तक बार-बार हो चुके हैं। निरन्तर एक ही काम से मन ऊब जाता है। क्या यह व्यर्थ नहीं है?

क्या तू यह नहीं चाहता कि अपनी बुद्धि और पुण्य को उन्नत करे? खेद है कि तुझे बहुत-सी बातें जानने की आवश्यकता है। कौन तुझे सब कुछ सिखाये? जो थोड़ा समय तेरे पास है, उसे भी व्यर्थ गँवा रहा है। तब यह शिकायत अत्यन्त अनुचित है कि तेरी आयु के दिन गिने-गिनाये हैं।

पूर्ण ज्ञान न होने पर खेद न कर! वह तो तेरे साथ ही समाधि के भीतर जायगा। बस, ईमानदार बन, तू परलोक में बुद्धिमान कहलायेगा। कौए से यह मत कह कि तुझे उससे सातगुना अधिक आयु मिली है। न हिरन के बच्चे से सम्बोधन कर कि तुझे ऐसी आँखें प्रदान हुई हैं, जो अपनी सन्तान की कई पीढ़ियों को देख सकता है। क्या उनका जीवन दोषपूर्ण है? क्या वे इस योग्य हैं कि तू अपने जीवन की उनके साथ तुलना करे? क्या वे दुष्ट निर्दयी और कृतघ्न हैं? उनसे शिक्षा ग्रहण कर। क्या निर्दोषिता और चलन की सादगी लम्बे जीवन का कारण नहीं? यदि तू अपना जीवन बिताने की इन पशुओं से उत्तम कोई विधि जानता है, तो इससे भी थोड़ा जीवन तेरे लिए काफी है।

कितना आश्चर्य है कि मनुष्य यह जानते हुए भी कि उसका अत्याचार उसके क्षणिक जीवन तक ही सीमित है, वह संसार को अपना गुलाम बनाना चाहता है। यदि कहीं जीवन अनादि होता, तो न जाने वह क्या करता!

तुझे जीवन के पर्याप्त दिन मिले हैं, किन्तु खेद है कि तू उनका मूल्य नहीं आँकता, व्यर्थ ही उनको बरबाद करता है। तू उन्हें इस प्रकार व्यय करता है, मानो वे अत्यधिक हैं। इस पर भी कुढ़ता है कि वे संचित कोष की तरह तुझे वापस क्यों नहीं मिल जाते! फिर भी यदि जीवन के छोटे होने की शिकायत करे, तो यह तनिक भी उचित नहीं।

याद रख, धन-दौलत की अधिकता सम्पन्नता का प्रमाण नहीं, मितव्ययिता ही सच्ची अमीरी है। बुद्धिमान् आरम्भ से ही अच्छा प्रबन्ध तथा मितव्ययिता पर दृष्टि रखता है, किन्तु मूर्ख सदा आरम्भमात्र करता है।

यह मत सोच कि धन एकत्र कर लूँ, तो सुख प्राप्त होगा। जो व्यक्ति वर्तमान को अपनी असावधानी से नष्ट करता है, वह मानो उस संचित कोष को भी नष्ट करता है, जो उसके पास है। जिस प्रकार सैनिक को इसका ज्ञान होने से पूर्व कि बाण कहाँ से आया, उसका हृदय बिंध जाता है, उसी प्रकार शरीर से प्राण निकल जायगा, इससे पूर्व पता चले कि कभी शरीर में जीवन भी था!

तो जीवन क्या चीज है कि मनुष्य उसकी लालसा करे! श्वास के आने-जाने में क्या धरा है कि उसकी लालच हो!

क्या जीवन एक स्वप्नमात्र, दुर्घटनाओं का क्रम तथा अटूट बुराइयों के पीछे भागनेवाला नहीं है? इसमें आरम्भ में अज्ञान, बीच में दर्द और अन्त में दुःख है! जिस प्रकार एक लहर दूसरी लहर को रेलती है और दोनों पीछे से रेलनेवाली लहरों के साथ लुप्त हो जाती हैं, उसी प्रकार मनुष्य के जीवन में एक विकार के पश्चात् दूसरा विकार आता है और वर्तमान का बड़ा विकार पिछले विकारों को निगल लेता है। हम इन विकृतियों से भयभीत रहते हैं और असम्भावित बातों और करामातों पर आशा किये बैठे रहते हैं। हमारा भय तो वैसा ही होता है, जैसा एक मूर्ख और नश्वर मनुष्य का। किन्तु आशाएँ और इच्छाएँ देवताओं के सदृश हैं।

जीवन का वह कौन-सा भाग है, जिसके स्थायित्व पर हम प्रसन्न रहें ? यदि जवानी को पसन्द करते हैं, तो मानो विलासिता, व्यर्थ कोलाहल और असावधानी को गले लगाते हैं ! यदि बुढ़ापा पसन्द करते हैं, तो मानो दुर्बलता और वीमारी पसन्द करते हैं ।

कहा जाता है कि वयोवृद्ध और श्वेत केशवालों का आदर-सत्कार अधिक होता है । किन्तु याद रख, उत्तम और उत्कृष्ट गुण जवानी में भी मनुष्य के आदर-सत्कार के कारण होते हैं । यदि ये विशेषताएँ न हों, तो वयोवृद्ध के मस्तक से अधिक उसकी आत्मा पर झुर्रियाँ पड़ जाती हैं !

क्या वृद्धों का इस कारण अधिक आदर होता है कि वे व्यर्थ का कोलाहल पसन्द नहीं करते ? किन्तु इसमें कौन-सी विशेषता है ? जव जवानी वीत गयी, तो सुख और आराम से घृणा हो गयी ! सच्ची वात तो यह है कि स्वयं सुख और आराम ही वृद्ध से घृणा करता है !

अतः जवानी के दिनों में सदाचार और सद्‌गुणों का संग्रह कर, जिससे वृद्धावस्था में भी तेरा सम्मान हो ।

सोच-विचार | ७

हे मनुष्य ! विचार कर, तू क्यों पैदा किया गया है ? अपनी सामर्थ्य, अपनी आवश्यकताओं तथा अपने सम्वन्ध आदि पर विचार कर, ताकि तुझे अपने जीवन के कर्तव्य का ज्ञान हो सके, जो सभी मार्गों में तेरा पथ-प्रदर्शन कर सके ।

जव तक तू अपने शव्दों को तौल न ले, तव तक जवान वन्द रख ! अधिक सोच-विचार के वाद ही कदम उठा । यदि तू सदा ऐसा करेगा, तो अपमान से वचा रहेगा । लज्जा तेरे पास नहीं फटकेगी । ग्लानि तुझसे दूर भागेगी और शोक-सन्ताप की झलक तेरे चेहरे पर दिखायी न पड़ेगी ।

असावधान व्यक्ति अपनी जवान को लगाम नहीं देता । जो कुछ मन में आता है, वकने लगता है । उसके शव्द ही उसकी मूर्खता का परिचय देते हैं । अधीरता में व्यक्ति दीवार लाँघता है, किन्तु दूसरी ओर उस खड्ड में जा गिरता है, जिसे वह नहीं जानता । यह उस मनुष्य का उदाहरण है, जो विना समझे-वूझे कोई काम आरम्भ कर देता है ।

अतएव, ध्यान-ज्ञान की आवाज कान खोलकर सुन । उसका एक-एक शव्द वुद्धि-विवेक से पूर्ण है, जो तुझे सत्य और सुरक्षा के मार्ग पर ले जायगा ।

नम्रता और अहंकार

हे मनुष्य ! तू कौन है, जो अपनी बुद्धि पर गर्व करता है ? अपने ज्ञान और अनुभूति पर शेखी क्यों बघारता है ?

बुद्धिमत्ता की पहली सीढ़ी है, मनुष्य अपने को अबोध और मूर्ख जाने। यदि तू दूसरों की दृष्टि में मूर्ख बनना नहीं चाहता, तो अहंकार और अनुचित गर्व को छोड़ दे।

जिस प्रकार एक रूपवान् स्त्री सादे वस्त्रों में अधिक आकर्षक लगती है, उसी प्रकार चाल-चलन की सादगी, बुद्धि और विवेक का उत्तम और उत्कृष्ट अलंकार है।

महापुरुष की वाणी से सत्य को शोभा मिलती है। उसके शब्दों की गम्भीरता में उसकी त्रुटियाँ छिप जाती हैं। वह अपनी बुद्धिमत्ता में निमग्न नहीं रहता। मित्र के परामर्श विचार-तुला पर तौलता और उनसे लाभ उठाता है।

वह अपनी प्रशंसा सुनना पसन्द नहीं करता और न उस पर उसका विश्वास ही होता है। वह अपने पराक्रम से स्वयं-विदित नहीं होता। जिस प्रकार पर्दे से सौन्दर्य-वृद्धि होती है, उसी प्रकार विनय और नम्रता से पुनीत गुण अधिक सँवरकर निखर उठते हैं।

साथ ही अहंकारी के अभिमान पर दृष्टि दे। वह भड़कीले वस्त्रों को पहनकर बाहर निकलता और मार्ग में इधर-उधर देखता है कि लोगों की दृष्टि उस पर है या नहीं ! वह चाहता है कि लोग उसे देखें।

वह अपना सिर ऊँचा रखता है तथा निर्धनों की ओर आँख उठाकर भी नहीं देखता। अपने से छोटों के साथ वह अत्यधिक गर्व और शेखी का व्यवहार करता है। परिणामतः उससे ऊँचे स्तरवाले लोग उसके अहंकार और मूर्खता की उपेक्षा कर उसकी ओर घृणा की दृष्टि से देखते हैं। उसकी मूर्खता पर हँसते हैं।

वह दूसरों के मत को तुच्छ समझता है, केवल अपनी ही राय पर उसे विश्वास है और इसी कारण वह व्याकुल रहता है।

वह अपने ही स्वेच्छाचार में मस्त रहता है। उसको खुशी इसीमें है कि सारे दिन उसीका बखान हुआ करे। भुखमरों की भाँति वह अपनी प्रशंसा के बड़े-बड़े कौर निगलता रहता है। परिणाम यह होता है कि चापलूस लोग उसे दीमक की तरह चाट जाते हैं। ●

परिश्रम और आलस्य

जो दिन वीत गये, सदा के लिए वीत गये। जो दिन आनेवाले हैं, तू नहीं जानता कि उनके दर्शन करेगा या नहीं। अतः हे मनुष्य! उचित है कि तू वर्तमान के दिनों से काम ले। वीते दिनों का दुःख न कर और न आनेवाले दिनों का भरोसा कर।

जो समय वर्तमान है, वही तेरा है। आनेवाला समय भविष्य के गर्भ में है। तू नहीं जानता कि वह कौन-सा रूप धारण करेगा। जो संकल्प कर, उसे तुरन्त पूरा कर। जिस काम को तू प्रातःकाल ही कर सकता है, क्या आवश्यक है कि सायंकाल तक उसे टाले रखे?

निर्धनता और दुःख आलस्य का परिणाम है, किन्तु पुण्ययुक्त परिश्रम प्रसन्नता और सौभाग्य लाता है।

परिश्रमी का हाथ निर्धनता को पराजित करता है। परिश्रमी के सिर पर सौभाग्य और सफलता का मुकुट रहता है।

वह कौन है, जिसने धन प्राप्त किया और सत्ताधारी वना? वह कौन है, जिसका सव लोग सम्मान करते हैं, जिसका नाम सभी नगरों में प्रशंसा के साथ लिया जाता है? वह कौन है, जो राजा का दरवारी और सलाहकार है? यह वही है, जिसने आलस्य का साथ छोड़ दिया और उससे स्पष्ट कह दिया कि 'तू मेरा शत्रु है।'

वह सुवह जल्दी उठता और रात को देर से सोता है। वह अपने मन को विचार से और शरीर को श्रम से शक्ति पहुँचाता है। वह दोनों की ही स्वस्थता का ध्यान रखता है। अर्थात् विचार की पवित्रता और श्रम के औचित्य को ध्यान में रखता है।

आलसी के लिए अपना जीवन कष्टप्रद हो जाता है। उसके दिन काटे नहीं कटते। वह प्रत्येक कार्य में शिथिलता का परिचय देता और व्यग्र रहता है कि क्या करूँ?

वादलों की छाया की तरह उसके दिन वीतते जाते हैं। वह अपने पश्चात् कोई स्मृति नहीं छोड़ जाता कि लोग उसे याद रखें।

श्रम के अभाव से उसका शरीर रोगों का भंडार वना रहता है। वह काम करना चाहता है, किन्तु उसमें हिलने की भी शक्ति नहीं रहती। उसका मन अन्धकार में और मस्तिष्क उद्विग्नता में डूवा रहता है। विद्या-प्राप्ति की ओर उसका मन आकृष्ट होता है,

किन्तु मेहनत नहीं हो पाती। वह बादाम खाना चाहता है, किन्तु उसे तोड़कर गिरी निकालने का कष्ट सहन नहीं कर सकता।

उसका घर अस्त-व्यस्त है, उसके नौकर-चाकर लंपट और झगड़ालू हैं। दिन-दिन वह विनाश और निर्धनता के निकट पहुँचता है। वह अपनी आँखों से देखता, कानों से सुनता और स्वयं भी अपेक्षा करता है कि विनाश से सुरक्षित रहूँ; पर इतना साहस नहीं कि कुछ कर सके; किन्तु जब तक विनाश बवंडर की भाँति उसके सिर पर नहीं मँडराता, तब तक कोई संकल्प नहीं करता। परिणामतः पश्चात्ताप, लज्जा और ग्लानि अपने साथ चिता पर ले जाता है।

१० | आगे बढ़

यदि तुझे सम्मान-प्राप्ति की कामना है और तू अपनी बड़ाई सुनने की अपेक्षा करता है, तो उस मिट्टी से ऊँचा हो, जिससे तू बना है। अपने संकल्प और उत्साह को प्रशंसनीय कार्यों की ओर अग्रसर कर। ऐसा व्यक्ति रात्रि में स्वप्न में महापुरुषों के पद-चिह्न देखता और दिनभर आनन्दमग्न हो उनका अनुकरण करता है। वह बड़ी-बड़ी योजनाएँ बनाता और उन्हें सफलतापूर्वक कार्यान्वित कर प्रसन्न होता है। अन्त में वह जब तक दुनिया है, तब तक अपना नाम छोड़ जाता है।

किन्तु ईर्ष्यालु व्यक्ति का मन कटुता का आगार है। वह विष की गाँठ है। उसकी ज़बान सदा जहर उगलती रहती है। पड़ोसी की सफलता उसकी नींद उड़ा ले जाती है। वह अपनी कोठरी में बैठा कुढ़ा करता है। दूसरों के कल्याण में वह अपनी हानि समझता है। ईर्ष्या और द्वेष उसके मन को खाते और पलते रहते हैं। उसे कभी भी शान्ति और चैन नहीं मिलता। उसके हृदय को पुण्य और प्रेम की हवा नहीं लगती। इसी कारण वह समझता है कि उसके पड़ोसी भी वैसे ही हैं, जैसा कि स्वयं वह। जो लोग उससे आगे बढ़ जाते हैं, सदा उनकी निन्दा और कुत्सा किया करता है। उनके आचार को दुराचार से जोड़ता है। वह उनकी घात में लगता और शरारत के लिए कटिबद्ध रहता है। किन्तु मानवता की फटकार उसके मुँह पर पड़ती है। वह मकड़ी की तरह स्वयं अपने जाल में फँसा रहता है।

बलूत का विशाल वृक्ष, जिसकी डालियाँ अब आकाश तक फैली हैं, किसी समय भूमि के गर्भ में एक तुच्छ बीज था।

अपने धन्धे में, चाहे वह कैसा ही क्यों न हो, सदा अग्रसर होने का उद्योग कर। ऐसा कर कि अच्छे काम में कोई दूसरा व्यक्ति तुझसे आगे बढ़ने न पाये ! किन्तु किसीकी क्षमता और दक्षता को ईर्ष्या और द्वेष की दृष्टि से न देख। सदैव अपनी दक्षता की वृद्धि का प्रयत्न करता रह।

अपने समकक्ष को किसी बेईमानी और नालायकी के उपक्रम से पराजित करने से विमुख रह। उससे आगे बढ़ने की अपेक्षा अपने आपको उन्नत कर। जो लोग इस प्रकार महत्ता और अच्छाई प्राप्त करने का प्रयत्न करते हैं, उनका सदा सम्मान किया जाता है, चाहे वे अपने प्रयत्न में असफल ही क्यों न हों।

पुनीत आकांक्षा से मनुष्य उच्च प्रकृति का हो जाता है। वह प्रसिद्धि पाने के लिए दौड़ लगाता है और घुड़दौड़ के घोड़े की भाँति उत्साहित होकर अपना मैदान तय करता है।

अत्याचार होने पर भी खजूर की भाँति उसका सिर ऊँचा रहता है। वह गरुड़ की भाँति आकाश में उड़ता और अपनी दृष्टि सूर्य के तेजस्वी प्रकाश की ओर लगाता है। ●

दूरदर्शिता

दूरदर्शी के शब्दों की ओर ध्यान दे। उसके परामर्श सुन और उन्हें अपने हृदय में सँजो ले। उसके उपदेश व्यापक हैं। वह सभी सुनीतियों और सद्गुणों का आधार है। दूरदर्शिता मनुष्य के जीवन की स्वामिनी तथा मार्गदर्शक है। जो लँगड़े पर हँसता है, वह सावधान हो जाय। ऐसा न हो कि स्वयं वह भी लँगड़ाने लगे। दूसरों की त्रुटियाँ सुनकर प्रसन्न होनेवाला अपनी बुराइयाँ सुनकर विक्षुब्ध होगा।

अपनी जबान को लगाम दे और अपने होंठों की रखवाली कर। कहीं ऐसा न हो कि तेरे शब्द मेल-मिलाप के काम और तेरे सुख में बाधा उत्पन्न करें। ऐसी बातचीत से खेद होता है, किन्तु मूकता सुरक्षित रखती है।

अधिक बोलनेवाला व्यक्ति सभा-समिति पर भार हो जाता है। उसकी प्रगल्भता से कान पक जाते हैं। वह इतनी अधिक बातें करता है कि दूसरों को बोलने का अवसर ही नहीं मिलता।

व्यर्थ शेखी मत बघार। अन्यथा याद रख, अपमानित होना पड़ेगा। दूसरों को हीन समझकर हँसी मत उड़ा। ऐसा करना खतरनाक है।

अपने शत्रु पर मत हँस। कहीं वह तुझ पर कटाक्ष न करे, जिसके कारण तुझे दुःखी होना पड़े।

अभद्र हँसी-मजाक मित्रता के लिए प्राणघातक विप है। जिसका अपनी जवान पर नियन्त्रण नहीं, वह एक दिन असीम कष्ट भोगेगा।

अपनी मर्यादा के अनुसार अपने घर को भी सजा। किन्तु ऐसा न हो कि सामर्थ्य से अधिक व्यय कर दे। इसका ध्यान रख कि जवानी की कमाई बुढ़ापे में काम आये।

लोभ से अनाचार पैदा होता है, किन्तु मितव्ययिता और सुप्रवन्ध से सद्गुणों और विशेषताओं का संरक्षण होता है।

तू अपने ही काम में लगा रह, देश की चिन्ता अधिकारियों पर छोड़ दे।

अपने मनोरंजन मात्र के लिए अधिक समय और धन नष्ट न कर। कहीं ऐसा न हो कि उसकी प्राप्ति का कष्ट उसके उपभोग के आनन्द से वढ़ जाय।

अपने सौभाग्य को दूरदर्शिता की आँखों पर पट्टी मत वाँधने दे और न सम्पन्नता और धनाढ्यता को ही यह अवसर दे कि वे मितव्ययिता के हाथ काट डालें। वह व्यक्ति, जो असंयम को जीवन-वृत्ति वनाता है, अन्त में वांछनीय वस्तुओं के लिए भी रोता है।

दूसरों के अनुभव से विवेक सीख और दूसरों की त्रुटियों से शिक्षा ग्रहण कर।

जव तक तुझे पूर्ण अनुभव न हो, किसी पर विश्वास न कर। किन्तु यह भी उचित नहीं कि अकारण तू किसीको विश्वासपात्र न जाने। ऐसा करना तेरी संकीर्णता का द्योतक होगा। जव एक व्यक्ति पूरी तरह विश्वस्त सिद्ध हो जाय, तो उसे अपने हृदय में अनमोल रत्न के समान स्थान दे।

दौलत के गुलामों की कृतज्ञता-प्राप्ति अच्छी नहीं और न भ्रष्टाचारी की मित्रता ही अच्छी है। वे तेरे गुणों और पुण्यों के प्रति माया-जाल सिद्ध होंगे और तेरी आत्मा के लिए दुःख और संताप का कारण वनेंगे।

यदि किसी वस्तु की तुझे कल आवश्यकता पड़नेवाली है, तो आज ही उसे काम में न ला और न किसी ऐसी वस्तु को खतरे में डाल, जिसे तू अपनी दूरदर्शिता और परिश्रम से सुरक्षित रख सकता है। फिर भी दूरदर्शिता से भी पूर्ण सफलता की आशा रखना व्यर्थ है; क्योंकि तुझे दिन के समय यह ज्ञान नहीं कि रात में क्या होनेवाला है।

यह वात निरपवाद नहीं कि मूर्ख सदा हतभाग्य हों और बुद्धिमान् सदैव सफल रहें। फिर भी मूर्ख को पूर्ण आनन्द कभी प्राप्त नहीं होता और न बुद्धिमान् सदा दुःख-सन्ताप का शिकार ही रहता है।

पराक्रम और सहनशीलता

जो व्यक्ति जन्म लेता है, आवश्यक है कि उसे संसार में भय, कष्ट, दुःख, दर्द और नुकसान उठाना पड़े। अतः हे मनुष्य ! उचित है कि तू बचपन से ही अपना हृदय सहन-शक्ति से सुदृढ़ कर, जिससे जब तुझ पर तेरे हिस्से का कष्ट आ पड़े, तो तू धैर्य और दृढ़ता के साथ उसे सहन कर सके।

जिस प्रकार ऊँट रेगिस्तान में कठिन परिश्रम, गर्मी, भूख और प्यास सहन करता है, हिम्मत हारकर गिर नहीं पड़ता, उसी प्रकार मनुष्य सहनशीलता और साहस के हाथों सभी आशंकाओं से सुरक्षित रहता है।

साहसी व्यक्ति दुर्भाग्य को तिरस्कारपूर्ण दृष्टि से देखता है। उसका आत्म-गौरव कभी पतनोन्मुख नहीं होता। उसका आह्लाद धन-दौलत पर आधार नहीं रखता। इसलिए वह उसके न्यूनाधिक होने से प्रभावित नहीं होता।

ऐसा मनुष्य समुद्र-तट की चट्टान की भाँति दृढ़ता से अपने पैर जमाये रखता है। लहरों के टकराने की उसे तनिक भी चिन्ता नहीं होती। वह पहाड़ की चोटी की तरह सिर ऊँचा रखता है, जिससे उसकी ओर तीर चलाने पर भी वह उस तक पहुँच नहीं पाता। दौलत के बाण उसके पैरों पर आ-आकर गिरते हैं।

उसकी सहनशीलता संकट के समय उसे सँभाले रहती है और उसका पराक्रम उसे बाहर निकालता है। उसे मन की तत्परता आशंकाओं से सुरक्षित रखती है। वह जीवन की क्षतियों और विकृतियों को उसी प्रकार सहन करता है, जिस प्रकार एक सैनिक, जो युद्ध में जाता और विजय प्राप्त कर लौटता है।

सहनशीलता से उसके संकट का बोझ कम हो जाता है। वह अपनी दृढ़ता से उसे सह लेता है।

किन्तु कायर की आतंकशील प्रकृति उसे लज्जित करती है। निर्धनता से आक्रान्त हो वह अधमता की ओर मुड़ जाता है। वह अपनी क्लीवता और पौरुषहीनता के कारण अपशब्द सुनता और अपने लिए आपदाओं का आह्वान करता है।

जिस प्रकार सरकंडा हवा के मामूली झोंकों से हिलने लगता है, उसी प्रकार क्षतियों की हल्की छाया से वह काँपने लगता है।

संकट के अवसर पर वह परेशान हो जाता है। जहाँ तनिक भी दुर्भाग्य दीख पड़े, धीरता उसका साथ छोड़ देती है। परिणामस्वरूप उस पर निराशा की घनघोर घटा छा जाती है।

सन्तोष

हे मनुष्य ! यह कदापि न भूल कि संसार में तेरी पद-प्रतिष्ठा ईश्वर की अनन्त बुद्धि से स्थिर है। वह तेरे मन के भेदों को जानता है। वह तेरी व्यर्थ आकांक्षाओं की वास्तविकता को भी समझता है और कभी-कभी दया कर तेरी इन प्रार्थनाओं को (स्वीकृत कर लेता है) अस्वीकृत कर देता है। * फिर भी उस उदार स्रष्टा ने समस्त वस्तुओं को इस प्रकार बनाया है कि वे तेरी उचित इच्छाओं और पुनीत चेष्टाओं के लिए, अपने स्वाभाविक गुणों के कारण तुझे सफलता की आशा दिलायें।

देख, वह दुर्भाग्य और आकुलता, जो तुझे मालूम पड़ती है, कहाँ से आती है ? वह तेरी बुद्धि की कमी, घमंड और बुरे स्वभाव से पैदा होती है।

अतः ईश्वरीय नियोजन और उसकी इच्छाओं को दोष न दे, बल्कि अपने को ठीक कर। अपने मन में कदापि इस बात का विचार तक न आने दे कि यदि मेरे पास धन-दौलत होती, तू सम्पन्न या सशक्त होता, तो प्रसन्न रहता। अच्छी तरह समझ ले, मुख्य आपदाएँ भी उन्हींके साथ हैं। निर्धन नहीं जानता कि वह व्यक्ति कितनी चिन्ताओं और आशंकाओं में ग्रस्त है, जिसके पास धन-दौलत है। जो व्यक्ति अशक्त है, उसे क्या पता कि शक्तिसम्पन्न को किन-किन कठिनाइयों और विकलताओं का सामना करना पड़ता है। जो व्यक्ति कार्यरत है, वह नहीं समझ सकता कि आलसी और बेकार आदमी को खिन्नता और विकलता कितनी सताती है। यही कारण है कि वह (कार्यरत) अपने भाग्य की निन्दा करता रहता है।

अतः सावधान ! किसी व्यक्ति के आनन्द और सुख के बाह्य स्वरूप पर ईर्ष्या मत कर, क्योंकि तुझे क्या पता कि उसका हृदय कैसे-कैसे दुःख-दर्द का आगार है।

थोड़ा-बहुत जो कुछ भी उपलब्ध हो, उसी पर संतोष करना बुद्धिमानी है। जो अपनी धन-दौलत बढ़ाता है, वह समझ ले कि अपनी चिन्ताएँ बढ़ाता है। संतोषी हृदय गुप्त कोषागार है, जिसे संकट ढूँढ़ने पर भी नहीं पा सकता।

यदि तू भाग्य के ऊँच-नीच के बहकावे में आकर न्याय, सदाचार, सत्कर्म, लज्जा और संतुलन न खोयेगा, तो याद रख, धन-दौलत भी तुझे सुख और आनन्द से वंचित

---

* उर्दू के दो अनुवादों में परस्पर विरोध है। बातें दोनों ही उचित हैं। इसलिए दोनों लिखी गयी हैं।—अनुवादक

न रखेगी। तब तुझ पर यह भेद भी खुल जायगा कि सुख-समृद्धि से भरा प्याला कितना ही शुद्ध और बेमेल हो, किसी भी दशा में नश्वर मनुष्य के लिए स्वादु और आनन्ददायक नहीं।

ईश्वर ने तेरे लिए सुन्दर और मनमोहक वृत्ताकार क्रीड़ास्थल निर्मित किया है कि तू इसमें दौड़े। वास्तविक आनन्द इसका अभीष्ट पड़ाव है। उस समय तक कोई व्यक्ति उस पड़ाव तक नहीं पहुँच सकता, जब तक वह अपनी परिक्रमा पूरी न कर ले। इसके बाद ही उसको अनन्त आनन्द और सुख प्राप्त होगा।

●

संयम और मनोदमन

यदि जीते-जी वास्तविक आनन्द चाहता है, तो वह तुझे नीरोगता, वुद्धि और मन की परितुष्टि से प्राप्त हो सकता है। ये वस्तुएँ केवल ईश्वर के प्रतिदान और कृपा से मनुष्य को प्राप्त हो सकती हैं।

यदि तू इन पवित्र उपहारों को बुढ़ापे की सीढ़ी पर पैर रखने तक स्थिर रखना चाहता है, तो विलासिता और आसक्ति के लोभ से दूर हट। जब कि तेरे सम्मुख स्वादिष्ट भोजन रखा गया हो, प्याले में अंगूरी शराब छलक रही हो और मन में यह इच्छा हिलोरें ले रही हो कि निश्चिन्त हो सुख-चैन करूँ, तो अच्छी तरह याद रख कि वह अवसर बड़ा खतरनाक है।

अतः ऐसे समय बुद्धि और विवेक से काम ले। यदि तू पुण्य के शत्रु का परामर्श स्वीकार कर लेगा, तो अवश्य धोखा खा जायगा।

विलासिता का आनन्द पागलपन है। आसक्ति से मनुष्य रोगों से घिर जाता है और अन्त में मृत्यु का ग्रास बनता है। चौके की ओर देख। उसके अतिथियों पर दृष्टि डाल, उनकी दशा पर विचार कर, जो उसकी मुसकान पर लट्टू हो वहाँ पहुँचे और उसके लोभ में फँस गये। क्या वे रुग्ण, शक्तिहीन और हतोत्साह नहीं दीख पड़ते? क्या क्षणिक आनन्द और सुख के पश्चात् निम्नतम स्तर तक वे नहीं पहुँचते और दुःख-दर्द के शिकार नहीं होते?

तृप्ति के अतिक्रमण से उनकी इच्छा-शक्ति का ह्रास हो गया। इच्छाओं की पूर्ति का स्वाद उन्हें आनन्द नहीं देता। आसक्ति ने उन्हें ग्रस लिया। जो लोग ईश्वरीय प्रतिदान का अनुचित प्रयोग करते हैं, उनको यही दण्ड है।

देख, सामने देख ! वह कौन है, जो रमणीक प्रदेश से मनमोहक वेश और आकर्षक चाल-ढाल से आ रही है। उसके फूल-सरीखे कपोलों से गुलाब भी लजाता है। उसकी प्रत्येक श्वास मलय-समीर से भी अधिक सुगन्धित है। उसकी आँखों में उल्लास, सतीत्व और लज्जा हिलोरें ले रही है। वह चलते-चलते अत्यन्त मनभावने स्वरों में राग अलाप रही है।

समझा, यह कौन है ? इस सुन्दरी का नाम है—तन्दुरुस्ती ! इसकी माता का नाम है तपस्या और बाप का नाम सदाचार ! इनके सुपुत्र शानटान हू देश के उत्तरीय पर्वतों पर निवास करते हैं।

वे पराक्रमी, शूर-वीर, चतुर, चालाक और जिन्दादिल हैं। उनमें अपनी बहन के सभी गुण हैं। उनकी नसों और हड्डियों में शक्ति और जीवन है। दिनभर श्रम करना ही उनके आनन्द का कारण है।

उनके पिता की वृत्ति से उनकी भूख बढ़ती है और माँ का जलपान और भोजन उनमें आर्द्रता और नवीनता का संचार करता है।

इच्छाओं से युद्ध करना उनकी प्रसन्नता है और दुराचारों पर विजय पाना उनके गौरव का सूचक है। चूँकि उनका मनोरंजन सन्तुलित होता है, इसलिए उनका आनन्द भी निर्बाध, सहज और अखण्ड होता है। वे सोते कम हैं, किन्तु उनकी निद्रा गाढ़ और सुखपूर्ण हुआ करती है।

उनका रक्त विकार-रहित और मन परितुष्ट रहता है। वैद्य इनके घर का मार्ग भी नहीं जानता।

किन्तु मनुष्य के लिए कहीं भी वास्तविक सुरक्षा नहीं। देख, बाहर से कितने खतरे घेरा डाले हुए हैं और एक नमकहराम इन्हें वन्दी करा देने के लिए चुपचाप अन्दर खड़ा है।

उनका स्वास्थ्य, शक्ति, चुस्ती-चालाकी और सुन्दरता देख आसक्ति ने उनके मन में दूसरे ही प्रकार की भावनाएँ पैदा कर दीं।

वह अपने उपवन के एक घने कुञ्ज में खड़ी हो उनका ध्यान अपनी ओर आकृष्ट करना और उन्हें अपने मायाजाल में फँसाना चाहती है।

उसके अंग-प्रत्यंग अत्यन्त कोमल हैं, वेश मनमोहक और भूषा सुन्दर और चित्ताकर्षक है। वह मनमोहक अंगों के प्रदर्शन में बाधक नहीं है। उसके नेत्रों से चपलता और वक्षःस्थल से लोलुपता प्रकट हो रही है। वह अँगुलियों से उन्हें बुलाती और चपल आँखों से मन को आसक्त करती है। उसके मीठे बोल पर मन ललचाया जा रहा है।

उसके मायाजाल से बच और चित्ताकर्षक शब्दों पर कान न धर। यदि तू उसके फन्दे में आ जायगा और मीठे बोल सुन बैठेगा, तो सहज ही वह तेरे गले में बाँहें डाल देगी और तू सदैव के लिए उसका वन्दी बन जायगा।

इसका परिणाम यह होगा कि लज्जा, रोग, दीनता, खेद, चिन्ता और इसी प्रकार की दूसरी आपदाएँ तुझे धर दवायेंगी। विलासिता, आसक्ति और आलस्य से तेरे अंग-अंग की शक्ति क्षीण हो जायगी और नीरोगिता तुझसे नाता तोड़ लेगी। आयु क्षीण हो जायगी और तू हर जगह अपमानित होगा। दुःख-दर्द तेरी छाती पर सवार रहेंगे। उस समय कोई न होगा, जो तुझ पर तरस खाये! ●

पुण्य

हे मनुष्य! अपनी आवश्यकताओं पर विचार कर, अपनी त्रुटियों को देख और सृष्टिकर्ता के पुण्य को स्वीकार कर। उसने तुझे बुद्धि और विवेक प्रदान किये, वाक्शक्ति दी और मनुष्य-योनि में जन्म देकर एक-दूसरे के साथ सहकार्य एवं परोपकार करने की परम्परा स्थापित कर दी है।

खाने-पीने का सामान, रहने-सहने का सच्चा आनन्द, जानमाल की सुरक्षा, जीवन के सभी सुख और समृद्धियाँ तुझे दूसरों की सहायता से ही प्राप्त होती हैं। यह सब सामाजिक जीवन का ही फल है। अतः तेरा धर्म है कि तू मानव-समाज का मित्र बन, इसमें तेरा ही लाभ है; जिससे वे भी तेरा कल्याण और सुख चाहनेवाले बनें।

जिस तरह गुलाब से सहज ही सुगन्ध निकलती है, उसी तरह सुशील, सज्जन और परोपकारी व्यक्ति के हृदय से पुनीत कर्म उत्पन्न होते और दूसरों को लाभ पहुँचाते हैं।

उसके मन में सुख-शान्ति और शक्ति का वास होता है। वह अपने पड़ोसी का कल्याण और सौभाग्य देखकर आनन्दित होता है। किसीकी निन्दा सुनना पसन्द नहीं करता, बल्कि दूसरों के दोष और त्रुटियाँ देख उसका दिल दुःखी ही होता है।

वह सबकी भलाई करने की इच्छा रखता है। पुण्य करने के अवसर और स्थान को खोजता रहता है। दूसरों के दुःख दूर करने में वह ऋण-मुक्ति और आनन्द अनुभव करता है।

अपने विस्तीर्ण हृदय से वह मानव-समाज का कल्याण चाहता रहता है। वह अपने हृदय की उदारता से सबकी आनन्द-वृद्धि का प्रयत्न करता है। ●

न्याय

सामाजिक या सामूहिक सुख और शान्ति न्याय पर आधृत है। प्रत्येक मनुष्य के आनन्द का आधार इसी पर है कि वह अपने खून-पसीने की कमाई और स्वयं-उपार्जित सम्पत्ति से आनन्द का उपभोग करे। अतः तू अपनी इच्छाओं और लालसाओं को मर्यादित रख और सदैव न्याय को अपना पथ-प्रदर्शक बना, जिससे कि सीधी राह चल सके।

अपने पड़ोसी की सम्पत्ति पर सतृष्ण दृष्टि मत डाल और न उसे हाथ लगा।

पड़ोसी पर लालच और क्रोधवश हाथ मत उठा, कहीं ऐसा न हो कि तू उसके लिए प्राणघातक बन जाय!

उसके सदाचार पर लांछन न लगा और न उसके विरुद्ध झूठी गवाही दे। उसके नौकरों को धोखा देने और नौकरी छोड़ने के लिए मत उकसा और न रिश्वत दे। उसकी नेकचलन पत्नी को पाप करने को तैयार मत कर; क्योंकि ऐसा करने से उसके हृदय को जो दुःख पहुँचेगा, उसका निवारण कदापि सम्भव न होगा। उसकी आत्मा ऐसी व्याकुल होगी, जिसका प्रायश्चित्त असम्भव हो जायगा।

अपने सारे काम-काज में न्याय और मर्यादा का अतिक्रमण न कर। जिस व्यवहार की तू अपने लिए अपेक्षा करता है कि लोग तेरे साथ करें, तू भी उनके साथ उसी प्रकार का व्यवहार कर।

अपनी प्रतिज्ञाओं की पूर्ति ईमानदारी से कर। जिसे तुझ पर विश्वास है, उसे धोखा न दे। ईश्वर की दृष्टि में छल-कपट झूठ से भी भयानक पाप है।

गरीबों पर अत्याचार न कर और न मजदूरों को उनकी मजदूरी से वंचित कर।

यदि लाभ के लिए तू किसी वस्तु को बेचता है, तो अपनी अन्तरात्मा की आवाज पर कान धर, उचित लाभ पर संतोष कर। ग्राहक की अनभिज्ञता के कारण उसे धोखा मत दे।

तूने जिससे ऋण लिया है, उसे चुका दे; क्योंकि जिसने तुझे ऋण दिया है, उसने मानो तेरी सज्जनता पर भरोसा किया है। उसका हक उसे न देना न्याय और सज्जनता, दोनों के प्रतिकूल और बड़ी नीचता है।

हे मनुष्य, अपने मन की थाह ले। अपनी स्मृति को अपनी सहायता के लिए बुला। यदि किसी प्रसंग में तुझसे भूल-चूक हो तो खेद प्रकाश कर, लज्जित हो और यथा-सम्भव तुरन्त उसे सुधार। ●

उदारता और दान | १७

वह मनुष्य धन्य है, जिसने अपने हृदय में शुभ-चिन्तन का बीज बोया। उदारता, दानशीलता और प्रेम उसके फल हैं।

उसके हृदय के स्रोत से पुण्य नदी बह रही है, जो मानव-समाज के कल्याण और हित के लिए उमड़ती चली आ रही है।

संकट में वह दीनों की सहायता करता है। मनुष्यमात्र के कल्याण के लिए अपने सहकार्य से आनन्दित होता है।

वह अपने पड़ोसियों पर कभी लांछन नहीं लगाता और न ईर्ष्या और द्वेष की कथाओं पर उसे विश्वास है। वह दूसरों की बुराई और निन्दा सुनकर भी उसे अपनी ज़बान पर नहीं लाता।

जब उसे कोई हानि पहुँचती है, तो वह उसे न केवल क्षमा कर देता है, बल्कि अपनी स्मृति से मिटा देता है। प्रतिशोध और वैर की इच्छा उसके मन में पैदा नहीं होती।

बुराई के बदले वह बुराई नहीं करता। उसे अपने शत्रुओं से भी घृणा नहीं होती, बल्कि उनके अन्याय का प्रतिकार वह मैत्रीपूर्ण प्रबोधन और उपदेश के रूप में करता है।

वह जब किसीको चिन्तित और दुःखी देखता है, तो उस पर तरस खाता है। वह उसके दुःख का बोझ हलका करने का प्रयत्न करता है और सफलता का आनन्द उस प्रयत्न का पुरस्कार होता है।

वह क्रोधी के क्रोध को ठंढा करता है। आपसी विवाद दूर करने में उसे आनन्द आता है। वह आपसी कलह और विकार के उत्पात को दूर करता है।

वह अपने पास-पड़ोस में सन्धि और मैत्री का विकास करता है। अतः सब लोग उसका नाम कृतज्ञता और सम्मान के साथ याद करते हैं। ●

कृतज्ञता

जिस प्रकार पेड़ की डालियों को जड़ों द्वारा पानी मिलता है और वे फिर उसे वापस कर देती हैं, अथवा जिस तरह नदियाँ समुद्र के पानी को बादलों से प्राप्त कर पुनः उसे वापस कर देती हैं, ठीक उसी प्रकार कृतज्ञ पुरुष भी उन उपकारों को, जो उसने परोपकारी से प्राप्त किये हैं, लौटाकर प्रसन्न होता है।

वह अत्यन्त प्रसन्नतापूर्वक उपकारों को स्वीकार करता है। अपने दयावान् परोपकारी को बड़े प्रेम और सम्मान की दृष्टि से देखता है।

यदि परोपकार का बदला उसके लिए असम्भव है, तो वह कृतज्ञता के आवेग के साथ अपने मन में उसे याद रखता है। वह जीवनभर अपने परोपकारी के उपकार को नहीं भूलता। उदार और दानी के हाथ आकाश के उन बादलों के समान हैं, जिनकी वर्षा से पृथ्वी पर भाँति-भाँति के फल-फूल और पेड़-पौधे पैदा होते हैं। किन्तु कृतघ्न का हृदय रेगिस्तान की रेत के सदृश है, जो कुल पानी सोख जाता और पैदावार कुछ नहीं होती।

अपने उपकारी से ईर्ष्या मत कर और न उस लाभ को छिपाकर रख, जो तुझे उससे पहुँचा है। यद्यपि किसीका उपकार ग्रहण करने से अधिक उत्तम उपकार करना है और लोग उदारता की बड़ी प्रशंसा करते हैं, किन्तु कृतज्ञ की विनयशीलता और विनम्रता का हृदय पर बड़ा प्रभाव पड़ता है। ईश्वर और मनुष्य दोनों की दृष्टि में वह प्रिय है।

अतः तू सदा परोपकार को अपने मन में स्थान दे और अच्छे ढंग पर उसको प्रशिक्षित कर, ताकि जब उदारता तेरे घर में पदार्पण करे, तो वह यह न कहे कि हम दोनों एक-दूसरे के लिए अजनबी हैं।

किन्तु घमंडी के उपकार का निषेध कर! स्वार्थी और लालची व्यक्तियों का अनुगृहीत होना अच्छा नहीं, क्योंकि एक के घमंड के कारण तू लज्जित होगा और दूसरे के लालच का कभी अन्त न होगा।

सचाई और प्रवंचना | १९

यदि तू सचाई की सुन्दरता पर मोहित है और उसका सहज सौन्दर्य तेरा हृदय जीत चुका है, तो उसका विश्वासपात्र बना रह। उससे कदापि विमुख न हो। नेकी का सातत्य तुझे सम्मानित करेगा।

सत्यभाषी की जीभ की जड़ उसके मन में होती है। छल-कपट का कोई भी शब्द उसकी जबान से नहीं निकलता।

झूठ से वह लज्जित और व्याकुल रहता है। किन्तु सच बोलने में सदा तत्पर रहता है।

वह पुरुषार्थ के बल अपने उत्तम चाल-चलन को स्थिर रखता है। छल-कपट और प्रवंचना से घृणा करता है।

वह अपनी ज़बान का पाबन्द होता है। जो कहता है, उसे पूरा करता है। कभी हतोत्साह नहीं होता। उसमें सत्य कहने का साहस है, किन्तु झूठ से डरता है।

पाखण्ड के नीच कर्मों से उसका अंचल पाक होता है। जो विचार उसके मन में होते हैं, वे ही उसकी ज़बान से निकलते हैं।

अच्छी तरह सोच-विचारकर वह अपनी ज़बान खोलता है। वह सत्य को भली-भाँति जाँच लेता और उसके अनुसार बोलता है।

उसके परामर्श मैत्रीपूर्ण होते हैं। ताड़ना और धिक्कार के उचित अवसर पर वह संकोच नहीं करता। जो वचन देता है, उसे निभाता है।

किन्तु पाखण्डी और कपटी व्यक्ति के मनोभाव गुप्त रहते हैं। वह प्रकट तो करता है कि उसके बोल सचाई से भरे हैं, लेकिन मन में उसके कपट रहता है।

वह मन ही मन दूसरे के दुःख पर प्रसन्न होता और आनन्द पर रोता है और उसकी बातों से उसका मनोभाव प्रकट नहीं होता।

वह छछूंदर की तरह अन्धकार में सुरंग खोदकर अपने को सुरक्षित समझता है। प्रकाश की चकाचौंध के कारण गलती करता है। किन्तु मिट्टी-युक्त सिर से तथ्य प्रकट हो जाता है।

उसका जीवन द्विविधा में ही बीतता है, दिल और ज़बान में कभी मेल नहीं होता।

वह अपने-आपको सच्चा सिद्ध करना चाहता है, या यह कहो कि वह नुमाइशी सच्चा है। वह प्रवंचनापूर्ण विचारों पर अपने को धन्यवाद देता है।

हे मूर्ख मनुष्य ! जो मेहनत तू अपनी वास्तविकता छिपाने में करता है, वह उस मेहनत से कहीं अधिक है, जो तू अपनी नुमाइश और पाखंड के लिए करता है। बुद्धिमान् पुरुष तेरी मक्कारी पर हँसते होंगे। जब कि तू अपने को सुरक्षित समझता होगा, तेरा छल प्रकट हो जायगा। सब लोग तुझे नीच समझेंगे। ●

अहंकार

मनुष्य पर चंचलता की छाया है। असंयम जैसा चाहता है, नाच नचाता है। निराशा अपनी ओर आकृष्ट करती है और भय उद्घोष करता है कि देख, मैं तुझ पर कैसा अधिकार जमाये हूँ। मेरे इस अधिराज्य में कोई साझी नहीं। किन्तु अहंकार और आत्मवाद की पकड़ सबसे जबरदस्त है।

अतः मनुष्य की आपदाओं पर आँसू मत बहा, वरन् उसकी मूर्खता पर मुसकरा। घमंडी का पाखंडपूर्ण जीवन स्वप्न की भाँति है।

वे शूर-वीर, जो अपने साहस के लिए प्रसिद्ध हैं, इसी आत्मवाद के बुलबुले हैं। साधारणतः लोग अधीर और कृतघ्न होते हैं। उचित नहीं कि मूर्खों के लिए बुद्धिमान् अपने-आपको खतरे में डाले।

जो व्यक्ति वर्तमान व्यवहार से केवल इसलिए असावधानी बरतता है कि भविष्य के सुखद आनन्ददायक स्वप्न देखे तथा यह सोचे कि जब मैं अधिक प्रतिष्ठित और सम्पन्न हो जाऊँगा, तो मेरा व्यवहार कैसा होगा, उसे कुछ भी प्राप्त नहीं होता। वह स्वयं हवा खाता है और उसकी रोटी दूसरे उड़ा ले जाते हैं।

यदि तू आज की अपनी स्थिति के अनुसार काम करे, तो सम्पन्न होने पर लज्जित होने का कोई अवसर नहीं आयेगा।

घमंड के सदृश दूसरी कोई वस्तु नहीं, जो मनुष्य की आँखों पर पट्टी बाँधे और मनोदशा को उससे छिपाये। याद रख, जब कि तू स्वयं को नहीं देखता, तो दूसरों की आँखें तुझे स्पष्ट देखती हैं कि तू कितने पानी में है।

लाला का फूल देखने में तो अत्यन्त भड़कीला होता है, किन्तु सुगन्ध और गुण उसमें तनिक भी नहीं होता। वैसा ही वह व्यक्ति भी है, जिसकी आकांक्षाएँ तो बड़ी ऊँची हों, किन्तु योग्यता तनिक भी न हो।

घमण्डी व्यक्ति ऊपर से कितना ही तृप्त और सन्तोषी दीखे, किन्तु उसका मन सदैव बेचैन रहता है। आनन्द की तुलना में उसकी चिन्ताएँ ही अधिक होती हैं।

लालसाएँ और चिन्ताएँ मृत्यु तक उससे अलग न होंगी। उसके विचार का गोरखधन्धा उसके अस्तित्व और जीवन-सीमा के बाहर तक फैला रहता है। वह चाहता है कि मर जाऊँ, तो भी मेरी प्रशंसा हो; किन्तु ऐसी आशा रखना अपने को धोखा देना है।

जो व्यक्ति यह अपेक्षा करता है कि मृत्यु-शय्या पर भी उसके कानों में प्रशंसा की ध्वनि पहुँचा करे और कफन के भीतर उसका मन प्रसन्न हो ; वह उस व्यक्ति से अलग नहीं, जो अपनी विधवा से अविवाहित रहने का वचन इसलिए ले कि उसकी आत्मा को दुःख न पहुँचे।

तू जीवनभर सत्कर्म करता रह। इसकी परवाह न कर कि तेरे कर्मों के विषय में क्या कहा जाता है। उचित प्रशंसा पर संतुष्ट रह। तेरी सन्तान तेरी प्रशंसा सुनकर प्रसन्न होगी।

जिस प्रकार तितली अपने सुन्दर पंखों को स्वयं नहीं देखती और चमेली अपनी सुगंध आप नहीं सूँघती, उसी प्रकार वह मनुष्य है, जो भड़कीला दीखता है और इच्छा रखता है कि दूसरे लोग उसे देखें।

वह कहता है—भड़कीले और सुनहरे वस्त्रों से क्या लाभ ? मेरे दस्तरखान पर स्वादिष्ट भोजन होने पर भी व्यर्थ है, यदि उसे कोई देखनेवाला न हो और संसार को उसकी खबर न हो ! याद रख ! प्रशंसा तो उसी समय होगी, जब तू अपना वस्त्र नंगों को और अपना भोजन भूखों को देगा।

तू दूसरों की अनुचित प्रशंसा क्यों करता है ? केवल इसीलिए कि वे भी तेरी झूठी प्रशंसा करें। खुशामद करनेवाला भलीभाँति जानता है कि वह झूठ बोल रहा है, फिर भी तू उसे धन्यवाद देता है। सत्य वचन का आश्रय ले। उससे तुझे समुचित लाभ मिलेगा। घमण्डी व्यक्ति यद्यपि अपना बखान सुनकर आनन्दित होता है, किन्तु वह यह नहीं जानता कि आत्मश्लाघा दूसरे को अप्रिय होती है। वे ऐसी बातें सुनना पसन्द नहीं करते।

यदि उसने कोई प्रशंसनीय कार्य किया है अथवा उसके पास कोई प्रशंसनीय वस्तु है, तो वह चाहता है कि उसे विज्ञापित करे। उसकी यही अभिलाषा होती है कि दूसरे लोग उसीका बखान करते रहें।

ऐसी लालसाएँ स्वयं ही व्यर्थ सिद्ध हो जाती हैं, क्योंकि लोग यह नहीं कहते कि देखो, उसने यह किया अथवा उसके पास वह वस्तु है, वरन् यही कहते हैं कि इसे कितना घमण्ड है !

मनुष्य का हृदय एक ही समय वहुत-से कामों में तुरन्त आकृष्ट नहीं होता। किन्तु नुमाइशपसन्द व्यक्ति मूल की भी हानि करता है। वह वुलवुलों का अनुगमन करता है, जो तनिक देर में फूटकर अपना अस्तित्व खो देते हैं। जिससे उसे प्रतिष्ठा मिलती है, वह उसीको पृथ्वी पर पददलित करता है।

अधीरता

हे मनुष्य, अधीरता तेरी प्रकृति का अंग है, अतः तू इससे सावधान रह!

माता के गर्भ से ही तू परिवर्तनशील और अधीर पैदा हुआ है। नश्वरता तूने अपने पिता की कमर से ही पायी है। फिर तू कैसे धीर और स्थिर प्रकृति रह सकता है?

जिसने तुझे यह शरीर प्रदान किया है, उसीने इसमें दुर्वलता पैदा की है। किन्तु आत्मा के साथ तुझे धीरता भी दी है। यदि तू इससे काम लेगा, तो बुद्धिमान् होगा। यही विवेकशीलता तेरे लिए आनन्ददायी होगी।

सुचारु रूप से काम करनेवाला गर्व न करने की सावधानी रखे। वह यदाकदा ही अपनी इच्छा से ऐसा करता है। क्या अच्छा काम करना वाह्य प्रेरणा और नश्वर होने के अनुभव का परिणाम नहीं है? क्या सुसंयोग पर ही उसका आधार नहीं है? अतः वह प्रशंसा सुसंयोग के लिए ही शोभनीय है।

अपने ध्येय की पूर्ति में अधीरता से सावधान रह और अपने संकल्प की पूर्ति पर दृढ़ रह। यदि तू ऐसा करेगा, तो अपने स्वभाव के दो अवगुणों पर विजय पायेगा।

पक्षपात से काम लेना बुद्धि और विवेक के विरुद्ध है। मन की धीरता और दृढ़ता इस अवगुण को दूर करती है।

डाँवाडोल स्वभाव का व्यक्ति समझता है कि मैं वदलता जा रहा हूँ। किन्तु वह इसका कारण नहीं जानता। वह देखता है कि मैं स्वयं पार्थक्यशील हूँ, किन्तु उसका कारण उसे ज्ञात नहीं होता। किसी सत्य और उचित विषय में जव तू कभी भी दृढ़ता से विमुख न हो, तभी लोग तुझ पर विश्वास करेंगे।

अपने मार्गदर्शन के लिए नियम स्थिर कर ले और सदा उसीके अनुसार काम कर।

पहले इस बात पर भलीभाँति सोच-विचार ले कि तेरे द्वारा स्थिर किये गये नियम उचित और ठीक हैं, फिर उन पर दृढ़ रह। यदि ऐसा करेगा, तो तुझ पर इन्द्रियों का प्रभुत्व स्थापित न होगा। अपनी दृढ़ता के कारण उन गुणों से लाभ उठायेगा, जो तुझे दिये गये हैं। निराशा, चिन्ता और आपदाएँ तुझसे दूर रहेंगी।

किसी व्यक्ति पर सन्देह न कर, जब तक कि अपनी आँखों से उसकी बुराई देख न ले और जब देख ले, तो उसे विस्मृत न होने दे।

एक बार जो तेरा शत्रु हो चुका, वह कठिनाई से मित्र बनेगा; क्योंकि मनुष्य शीघ्र ही अपने दोष का सुधार नहीं करता।

जिसने अपने जीवन के मार्ग-दर्शन के लिए नियम स्थिर नहीं किये, उसके कार्य उत्तम और शुद्ध कैसे हो सकते हैं? जिस काम में बुद्धि का उपयोग नहीं किया जाता, वह कभी ठीक नहीं होता।

अस्थिर मनुष्य के हृदय में शान्ति और चैन को स्थान नहीं और न वह उन्हें भी चैन लेने देता है, जिनसे उसका सम्पर्क होता है।

उसका जीवन असमरस और उसके कार्य अनियमित होते हैं। ऋतुओं के साथ उसकी आत्मा भी बदलती रहती है।

आज वह तुझसे प्रेम करता है, पर कल अकारण तेरा शत्रु हो जाता है। वह स्वयं भी नहीं जानता कि ऐसा क्यों करता है। आज वह अत्याचारी बना है, किन्तु कल सहनशीलता की मूर्ति बन जायगा। इसका कारण भी उसे ज्ञात नहीं होता। जो बिना सामर्थ्य के गर्व करता है, एक दिन बिना नियंत्रण के भी गुलामी करने पर मजबूर हो जाता है।

आज वह शाहखर्ची में लीन है, किन्तु कल पेट भरने के लिए पाई-पाई पर ध्यान देगा। जो मध्यममार्गी नहीं है, उसकी यही दशा होगी।

कौन कह सकता है कि गिरगिट काले रंग का है, जब कि वह तनिक देर में घास में हरा दीख पड़ने लगेगा।

अस्थिर-चित्त मनुष्य को कौन प्रसन्न कह सकता है, जब कि थोड़ी देर में वह आहें भरता दीख पड़ेगा।

ऐसे व्यक्ति का जीवन स्वप्न की-सी छाया है। सुबह को वह प्रसन्न और सानन्द उठता है, दोपहर को आपदाओं से घिर जाता है। अभी वह देव बन जाता है, पर थोड़ी देर बाद एक तुच्छ कीड़े से भी बुरा हो जाता है। अभी वह हँसता है, पर थोड़ी देर बाद रोने लगता है। अभी वह एक वस्तु चाहता है, पर थोड़ी देर बाद उसे एकदम भूल जाता है।

तात्पर्य यह कि उस पर न तो सुख-दुःख का कुछ असर होता है और न हँसने-रोने का कोई कारण वह अपने पास रखता है। उसकी कोई भी दशा स्थिर और दृढ़ नहीं होती।

ढुलमुल-प्रकृति मनुष्य का आनन्द बालू की भीत है, जो हवा के मामूली झोंके से गिर जाती है।

किन्तु वह कांतिमय मुखमंडलवाला कौन है, जो निरन्तर सीधा इस ओर चला आ रहा है। उसके पग दृढ़ता से जमीन पर पड़ रहे हैं। उसका सिर झुका नहीं है। उसके मस्तक पर बड़प्पन की झलक है। सर्वाङ्ग से तत्परता टपक रही है। उसका हृदय स्वाभिमान और परितुष्टि का आगार है।

भले ही उसके सत्य-मार्ग में आशंकाएँ हों, वह बेधड़क कदम उठाये चला जाता है। यदि आकाश और पृथ्वी भी उसका मार्ग रोकें, तो भी वह अपने पैर पीछे नहीं फेरेगा।

उसके चरणों से पहाड़ दबते और समुद्र सूख जाता है। मार्ग में शेर उसे डरा नहीं सकता और न उसकी गति में विघ्न ही डाल सकता है और न चीतों के झुण्ड की उसे परवाह होती है।

रणक्षेत्र में वह बिना संकोच सैनिकों की पंक्ति को चीरता बढ़ जाता है। मृत्यु से उसे तनिक भी भय नहीं लगता।

तूफान के झोंके उसके कंधों से टकराते हैं, किन्तु उसे हिला नहीं सकते। बादल व्यर्थ ही उसके सिर पर गरजते हैं और बिजली की चमक तो उसके मुखमण्डल को और भी ओजपूर्ण बना देती है।

इसका नाम धीर है। यह संसार के सुदूर भाग से आता है। दूर से ही आनन्द को पहचान लेता है। उसकी दृष्टि इतनी तीव्र है कि ध्रुव के उस पार से ही आनन्द-मन्दिर को देख लेती है।

उसके द्वार तक पहुँचकर वह निर्भय हो उसके भीतर घुस जाता है तथा सदा वहीं रहता है।

हे मनुष्य! सत्यवादी बन, तब तू जान लेगा कि मनुष्य का सबसे बड़ा गुण यही है कि वह एकाग्रचित्त हो। ●

बुद्धि की दुर्बलता

हे मनुष्य ! तू घमंडी और डुलमुल-प्रकृति है। क्या तेरे लिए कमजोर वस्त्र की उपमा ठीक नहीं ? क्या नश्वरता और दुर्बलता का चोली-दामन का साथ नहीं ? क्या घमंड के बिना दुर्बलता रह सकती है ? अत: एक की आशंका से बचा रह, तो दूसरे के उत्पात से भी सुरक्षित रहेगा।

किन-किन विषयों में तू अशक्त है उनमें, जिनमें तू स्वयं को अत्यन्त शक्तिशाली जानता है; उन बातों के सम्बन्ध में, जिन पर तुझे गर्व है; उन वस्तुओं की प्रयुक्ति में, जो तेरे अधिकार में हैं तथा उन गुणों के प्रयोग में, जो तुझमें विद्यमान हैं।

क्या तेरी इच्छाएँ दोषजनक नहीं हैं ? क्या तू जानता है कि जिस वस्तु की तुझे इच्छा है, वह उचित है ? इच्छित वस्तु प्राप्त हो जाने पर भी तो तेरा मन संतुष्ट नहीं होता।

जो वस्तु तेरे सम्मुख उपस्थित है, उससे तुझे क्यों आनन्द नहीं मिलता ? वह वस्तु अधिक रसपूर्ण और आनन्दमय क्यों प्रतीत होती है, जो अभी तेरे अधिकार में नहीं आयी है ? कदाचित् इस कारण कि वर्तमान वस्तु से तेरी तृप्ति हो चुकी है और अपेक्षित वस्तु की खराबी से तू अनभिज्ञ है ! अच्छी तरह याद रख कि परितुष्टि में वास्तविक आनन्द का भेद निहित है।

यदि स्रष्टा सारे संसार की वस्तुएँ तेरे सामने रख देता, तो क्या तू अपनी रुचि के अनुसार उनमें से चुन लेता ? क्या उस दशा में तुझे आनन्द आता ? क्या तब तेरे आवास-गृह में सुख पाया जाता ?

खेद है, तेरी बुद्धि की दुर्बलता ऐसा कभी होने नहीं देती। तेरी शक्तिहीनता इससे विपरीत ही करती है ! तू वस्तुओं की अदला-बदली से सन्तुष्ट होता है, किन्तु वास्तविक आनन्द की प्राप्ति तो विश्वस्त और चिरस्थायी वस्तुओं से ही हो सकती है।

जब वह तेरे हाथ से निकल जाती है, तो तुझे खेद होता है। किन्तु जब तक तेरे अधिकार में होती है, तू उसका आदर नहीं करता।

जो वस्तु इसके पश्चात् आती है, उसमें भी तुझे आनन्द नहीं, और तू अपने मन में दु:खी होता है कि क्यों तूने इसे पसन्द किया।

विचार तो कर, तेरी बुद्धि की दुर्बलता उतनी अधिक और किसी समय प्रकट नहीं होती, जितनी वस्तुओं की अभिलाषा करने में होती है।

कोई उत्तम वस्तु जब हमारे अधिकार में आ जाती है और उसका उपभोग होने लगता है, फिर उसकी उत्तमता का अनुभव नहीं होता। जिन वस्तुओं को स्रष्टा ने हमारे लिए मधुर और रुचिकर बनाया है, आश्चर्य है कि वे ही हमारे लिए अप्रिय और कटु हो जाती हैं। हमारे आनन्द से दर्द और हमारे सुख से दुःख पैदा होता है।

यदि तू अपने आनन्द-काल में मध्यमार्गी रहे, तो वह सदा तेरे अधिकार में रहेगा। अपने आनन्द को औचित्य पर आधृत कर, तो दुःख कदापि तेरे पास न आयेगा।

प्रेम का आनन्द आहों से प्रारम्भ होता है और उसकी अति आलस्य और नीचता है।

जिस वस्तु की प्राप्ति की इच्छा से तू जलता रहता है, उसकी मधुरता मचली पैदा कर देती है। जब वह तेरे अधिकार में आ जाती है, तो उसकी उपस्थिति से तू तंग आ जाता है।

अपने उत्साह में सातत्य-वृत्ति का समावेश और मित्रता में प्रेम का सम्मिश्रण कर। तब तुझे अनुभव होगा कि आनन्द का बाहुल्य परितुष्टि से तथा आह्लाद का उन्माद परितृप्ति से श्रेष्ठ नहीं।

ईश्वर ने तुझे ऐसी कोई विशेषता प्रदान नहीं की, जिसमें कोई भी दोष न हो। किन्तु इसके साथ ही तुझे ऐसा साधन दिया है, जिससे तू गुण और दोष में भेद कर बुराइयाँ दूर कर सके।

जिस प्रकार कष्ट के बिना कोई आनन्द नहीं, उसी प्रकार दुःख भी सुख से खाली नहीं। यद्यपि सुख-दुःख एक-दूसरे के विपरीत हैं, किन्तु उनका सम्बन्ध अत्यन्त निकट है। यह हमारी खुशी पर निर्भर है कि हम जिसे चाहे प्राप्त करें—अंशमात्र अथवा सम्पूर्ण।

विषाद प्रायः स्वयं आनन्द पैदा करता है तथा अत्यधिक आनन्द में आँसू मिले रहते हैं।

उत्तम-से-उत्तम वस्तु भी मूर्ख के विनाश का कारण हो सकती है। किन्तु बुद्धिमान् व्यक्ति विकृति से भी अपने कल्याण का साधन निकाल लेता है।

हे मनुष्य! तेरी प्रकृति के साथ निर्बलता का इस प्रकार सम्मिश्रण है कि न तुझमें विशुद्ध सुशील बनने की शक्ति है और न पूर्ण कुटिल हो जाने की आशंका। इस बात पर प्रसन्न हो कि तू केवल अधर्म में ही सक्षम नहीं है। उसी गुण तथा शील पर संतुष्ट रह, जो तेरे लिए सम्भव है।

गुण विविध दशाओं पर निर्भर हैं, इसका क्षोभ न कर कि वे सब तुझे प्राप्त नहीं। असम्भव परिस्थितियों की खोज से क्या लाभ!

क्या तू चाहता है कि तुझमें एक साथ धनिकों की तरह उदारता और निर्धनों की भाँति संतोष हो? क्या तू अपनी पत्नी से केवल इसलिए घृणा करेगा कि उसमें वे गुण नहीं पाये जाते, जो विधवा स्त्री में भी पाये जाते हैं?

यदि तेरा पिता राज्य-क्रान्ति के अपराध में तेरे सामने उपस्थित हो, तो क्या एक ही समय में तेरा न्याय उसकी हत्या का आदेश देगा और पुत्र होने के नाते तू उसकी जान बचा सकेगा ?

यदि तू अपने भाई को मरणासन्न दशा में होनेवाला असह्य कष्ट पाते देखे, तो क्या तुझे दया नहीं आयेगी ? क्या तू चाहेगा कि उसे शीघ्र मार दिया जाय, जिससे वह इस कष्ट से छुटकारा पा जाय ? यदि तू ऐसा करे, तो क्या हत्यारा नहीं कहलायेगा ? सत्य सदा एक जैसा ही रहता है। भ्रम केवल तेरे ही मन से पैदा होते हैं। वह सर्वोच्च सत्ता, जिसने पुण्य और गुण पैदा किये हैं, उसीने तेरे मन में उनकी महत्ता के प्रति आदरभाव पैदा किया है। सदा बुद्धि के अनुसार काम कर। इससे तेरा अन्त सकुशल होगा। ●

अपूर्ण ज्ञान

यदि कोई वस्तु सबसे अधिक प्रिय है, यदि किसी वस्तु की कामना की जा सकती है, यदि कोई वस्तु पाना मनुष्य के लिए सम्भव है और स्वयं भी वह प्रशंसनीय है, तो वह ज्ञान है। किन्तु ज्ञान किसे प्राप्त होता है ?

बड़े-बड़े विधायक और बड़े-बड़े विचारक प्रचार करते हैं कि हम ज्ञानी हैं। शासक इसकी पात्रता का मुकुट अपने सिर पर धरना चाहते हैं। किन्तु क्या उनकी प्रजा कह सकती है कि वे सचमुच ज्ञानी हैं ?

मनुष्य को बुराई की आवश्यकता नहीं और न विकृतियों को ही किन्हीं वाञ्छनीय कारणों से स्वीकार करने की जरूरत है। फिर भी कानून की आँखें बचाकर न जाने कितनी बुराइयाँ अपनायी जाती हैं और लोक-सम्मति से बहुत सारे अपराध वैध ठहरा लिये जाते हैं।

हे मनुष्य-समाज के शासक ! बुद्धिमान् बन। तू विविध जातियों का प्रशासक है। याद रख, एक ऐसा अपराध, जिसे करने की तू छूट देता है, उन दस अपराधों से निकृष्ट है, जो दण्ड से बच जाते हैं।

जब प्रजा असंख्य हो, जब संतान अत्यधिक हो, तो क्या तू उन्हें उन निर्दोषों का वध करने अथवा उनकी तलवार से जूझने नहीं भेजता, जिनका उन्होंने कोई अपराध नहीं किया है ?

यदि एक हजार व्यक्तियों के कट मरने से तू संतुष्ट होता हो, तो कदापि ऐसी इच्छा पूरी करने की लालसा मत कर। यह सदैव याद रख कि उन्हें भी उसी स्रष्टा

ने पैदा किया है, जिसने तुझे जन्म दिया है। उनका रक्त भी तेरे रक्त की भाँति मूल्यवान् है।

क्या तू यह समझता है कि अत्याचार के बिना न्याय नहीं हो सकता? देख, तेरे ही शब्द तुझे अपराधी सिद्ध कर रहे हैं।

जब तू किसी अपराधी को झूठी आशा दिलाता है, ताकि वह अपराध स्वीकार कर ले, तो क्या इससे स्वयं अपराधी नहीं बन जाता? केवल इस कारण तेरा अपराध क्षुद्र नहीं हो सकता कि वह अपराधी तुझे दण्ड नहीं दे सकता।

जब किसी व्यक्ति पर अपराधी होने की शंका की जाती है और अपराध स्वीकार कराने के लिए तू उसे शारीरिक कष्ट पहुँचाता है, तो क्या तुझे स्मरण नहीं रहता कि हो सकता है, तू एक निरपराधी व्यक्ति का उत्पीड़न कर रहा है?

क्या इससे तेरा उद्देश्य पूरा हो जाता है? क्या उसके द्वारा अपराध स्वीकार किये जाने से तेरी आत्मा को संतोष हो जाता है? यन्त्रणा से बचने के लिए वह ऐसी बातों को स्वीकार कर लेता है, जो उसने नहीं कीं। कष्ट और यन्त्रणा के कारण निर्दोष अपने-आपको अपराधी बना लेता है।

किसीको फाँसी देने के लिए कारण ढूँढ़ना फाँसी देने से भी बुरी बात है और किसीको अपराधी सिद्ध करने के लिए प्रमाणों की खोज उसकी निरपराधिता का खून करना है।

हे सत्य के शत्रु और क्षुद्रबुद्धि मानव! जब तेरा शासक तुझसे हिसाब लेगा, तो उस समय तू कहेगा: "क्या ही अच्छा होता कि दस हजार अपराधी बिना दण्ड पाये छूट जाते, वह इससे उत्तम था कि एक निरपराध मेरे विरुद्ध अभियोग के लिए खड़ा हो!"

जब तू न्याय करने के अयोग्य है, तो सम्भव नहीं कि सत्य से परिचित हो! फिर कैसे सत्य के सिंहासन पर विराजमान हो सकता है?

जिस प्रकार उल्लू सूर्य के प्रकाश में अन्धा हो जाता है, उसी प्रकार सत्य के तेज और प्रताप से तेरी आँखें चौंधिया जायँगी।

यदि तू सत्य के पवित्र सिंहासन पर पहुँचना चाहता है, तो सबसे पहले उसके पद-सोपान को दण्डवत कर। यदि सत्य का ज्ञान चाहता है, तो सबसे पहले अपनी मूर्खता के प्रति अपना अज्ञान मिटा।

सत्य मूल्यवान् मोती से भी अधिक महत्त्वपूर्ण है। सावधानी से उसकी खोज कर। पन्ना, मानिक, पुखराज इसके सामने तुच्छ हैं। वीरतापूर्वक इसका अनुकरण कर।

उस तक पहुँचने का मार्ग परिश्रम है; विचार के मार्ग-दर्शन में तू उसके दरवाजे तक पहुँच सकता है। मार्ग में थककर न बैठ जाय, तो अवश्य वहाँ तक पहुँच जायगा। जिस समय तू वहाँ पहुँच जायगा, सारा परिश्रम प्रसन्नता में रूपान्तरित हो जायगा।

सावधान! कदापि यह विचार न कर कि चूँकि सत्य से शत्रुता उत्पन्न होती है, इसलिए उसका निषेध करूँगा। न यह कह कि पाखण्ड से मित्र पैदा होते हैं, अतः उसीका

अनुकरण करूँगा। क्या सत्य द्वारा पैदा होनेवाले मित्र उनसे उत्तम नहीं, जो खुशामद से पैदा होते हैं ?

मनुष्य स्वभावतः सत्यनिष्ठ है। किन्तु जब वह सामने आता है, तो उसे स्वीकार नहीं करता और जब बलात् उसके पास आ जाता है, तो उससे अप्रसन्न होने लगता है।

यह सत्य का दोष नहीं है, वह तो सर्वप्रिय है। मनुष्य की निर्बलता ही सत्य के तेज को सहन नहीं कर सकती। उसकी निर्बलता में भूल का सम्मिश्रण है।

यदि प्रत्यक्षरूप से तू अपनी अयोग्यता से परिचित होना चाहता है, तो उपासना के समय स्वयं को देख। धर्म का अभिप्राय यही है कि तू केवल ईश्वर से ही हित की इच्छा कर सकता है।

क्या वह (धर्म) स्मरण नहीं दिलाता कि तू मिट्टी का पुतला है और एक दिन मिट्टी में मिल जायगा ? क्या पश्चात्ताप तेरी निर्बलता, भूल और अपराध पर ही आधृत नहीं ?

जब तू सौगन्ध खाता है और इस बात की प्रतिज्ञा करता है कि अब धूर्तता नहीं करेगा तो देख, तेरे मुख-मंडल से लज्जा झलकने लगती है और उसके मुख-मंडल से भी, जो तुझसे प्रतिज्ञा करवाता है।

न्यायी बन, तो तुझ पर पश्चात्ताप का अवसर नहीं आयेगा। विश्वसनीय बन, तो तुझे सौगन्ध की आवश्यकता नहीं होगी।

वह व्यक्ति, जो अपने अपराधों को धैर्य के साथ सुनता है, दूसरों की भूल-चूक पर टोकने से नहीं हिचकता है।

जो व्यक्ति अपनी अस्वीकृति के लिए कारण रखता है, वह अपनी सुरक्षा का श्रम धीरता से सहन कर लेता है।

यदि किसी अपराध की तुझ पर शंका की जाय, तो स्वतंत्रतापूर्वक उत्तर दे। शंका अपराधी के अतिरिक्त अन्य किसीको भयभीत नहीं कर सकती।

कोमल हृदयवाला व्यक्ति विनय-अनुनय से मान जाता है। किन्तु घमंडी विनय-अनुनय से और अधिक वैर और हठ करने लगता है। अपूर्ण ज्ञान की धारणा तुझे सुनने पर उद्यत करती है। किन्तु न्याय के लिए यह आवश्यक है कि क्रोध और रोष के बिना सुने। अतः यह आवश्यक है कि जो कुछ तुझसे कहा जाय, उसे निष्क्रोध सुन, ताकि बुद्धि के अनुसार सब काम ठीक हो जायँ।

●

संकट

हे मनुष्य ! पुण्य में तू जैसा निर्बल और कच्चा है, मालूम ही है ! और आह्लाद के विषय में तेरी अस्थिरता-अयोग्यता प्रकट है । हाँ, एक विषय ऐसा है, जिसमें तू पक्का और अडिग है, वह है संकट ! वह तेरे ही अस्तित्व का अपृथक् अंग और तेरी ही प्रकृति का स्वत्व है । तेरे वक्षस्थल में उसका निवास है । तेरे बिना उसका अस्तित्व नहीं । विचार कर, वह कहाँ से उत्पन्न होता है ? उसका अस्तित्व तेरी ही भावना से है ।

किन्तु जिसने इसे तेरे लिए स्थापित किया है, उसीने तुझे बुद्धि और विवेक भी दिये हैं, ताकि तू उन पर विजय पा सके । यदि तू प्रयत्न करे, तो उसे पददलित कर सकता है ।

क्या संसार के लिए तेरे जन्म की रीति लज्जाजनक नहीं है ? क्या मनुष्य का विनाश प्रसिद्धि का कारण नहीं ? देख, मनुष्य उन शस्त्रों को, जिनसे दूसरों का वध करता है, सोने और हीरे से सजाता है और गर्व के साथ उन्हें धारण करता है । जो सन्तानोत्पत्ति का उपक्रम करता है, वह लज्जा से अपना मुख छिपाता है, जब कि हजारों का वध करनेवाला सम्मान-योग्य समझा जाता है ।

याद रख, यह केवल भूल है । परम्परा और परिपाटियाँ मूल सत्य को बदल नहीं सकतीं और न मनुष्य का मत न्याय की हत्या कर सकता है । मान-मर्यादा तथा प्रताप का सम्बन्ध हत्या के साथ और लज्जा का सम्बन्ध उत्पत्ति के साथ परम्परागत, वास्तविकता के विरुद्ध रखा गया है । लज्जा के स्थान पर यश और यश के स्थान पर लज्जा की प्रस्थापना असंगत है । उत्पत्ति की एक ही साधारण रीति है, किन्तु हत्या की सहस्रों विधियाँ हैं ।

खेद का विषय है कि मनुष्य को जन्म देनेवाले की प्रशंसा कोई नहीं करता, किन्तु हत्या करनेवालों को, रक्तपात के बदले में, राज्य और सम्मान दिया जाता है । अधिक सन्तान रखनेवाला व्यक्ति सम्पन्नता और बढ़ोतरी का भागी होता है, किन्तु दूसरों की हत्या करनेवाला अपनी ही जान की खैर मनाता रहता है ।

जब कोई असभ्य अपने रीति-रिवाज के अनुसार बालक के जन्म पर प्रसन्नता के स्थान पर दुःख और अपने पिता की मृत्यु पर दुःख के स्थान पर सुख और आनन्द प्रकट करता है, तो क्या वह अपने मन में स्वयं को क्रूर नहीं समझता ?

मनुष्य के भाग्य में बहुत से विकार हैं। किन्तु जब वह उनसे घबराकर विलाप आरम्भ करता है, तो उनको और भी बढ़ाता है।

मनुष्य के जीवन के कुल विकारों में बड़ा विकार संकट है। जन्म के साथ ही यह साथ हो लेता है। अतः इसे अपने कुपथ और अज्ञान से अधिक सिर न चढ़ाना चाहिए।

दुःख सदा तेरे साथ रहता है। सुख तो एक अजनबी की भाँति कभी-कभी तेरे पास आता है। यदि तू सदा बुद्धि से काम लेता रहे, तो दुःख तेरे पास न आयेगा। दूरदर्शी बन, तो सुख और आनन्द तेरे साथ रहेंगे। यद्यपि तेरी शारीरिक शक्तियाँ संकट सहन कर सकने योग्य हैं, किन्तु आनन्द के मार्ग कम और सँकरे हैं।

आनन्द तो अकेला ही आता है, किन्तु संकट और आपदाएँ एक साथ हजारों की संख्या में आती हैं।

जिस प्रकार फूस की अग्नि तनिक देर में सुलगकर तुरन्त बुझ जाती है, उसी प्रकार आनन्द का प्रकाश क्षणिक होता है। तुझे जान भी नहीं पड़ता कि वह कहाँ से आया और कहाँ चला गया।

दुःख बहुधा और सुख यदाकदा ही आता है। पीड़ा स्वयं आती है और सुख बड़ी कठिनाई से मिलता है। दुःख में आनन्द नहीं होता, किन्तु आनन्द में दुःख का सम्मिश्रण होता है।

जिस प्रकार पूर्ण आरोग्य का मूल्यांकन नहीं किया जाता और तनिक-से रोग का तुरन्त अनुभव कर लिया जाता है, उसी प्रकार सर्वश्रेष्ठ आनन्द हृदय पर उतना अधिक प्रभाव नहीं करता, जितना तनिक-सा दुःख प्रभाव डालता है।

हमें दुःख और आपदा से प्रेम है। किन्तु सुख से हम बहुधा दूर भागते हैं। जब किसी प्रकार वह हमें मिलता है, तो क्या उचित मूल्य की जगह हमें उसके लिए अधिक मूल्य देना नहीं पड़ता?

मनुष्य के लिए चिन्तन अत्यावश्यक है। अपनी दशा की पूर्ण जानकारी प्राप्त करना उसका विशेष धर्म है। किन्तु आनन्द के समय किसीको इसका ध्यान नहीं रहता। अतः क्या यह ईश्वर की कृपा नहीं कि हमें कष्ट सहन करना पड़ता है।

दुःख को मनुष्य सामने से जान लेता है और जब बीत जाता है, तो याद रखता है। वह विचार नहीं करता कि दुःख की तुलना में दुःख का चिन्तन अधिक कष्टप्रद होता है।

अतः जब संकट तुझ पर हो, उसी समय उसका ध्यान कर, क्योंकि ऐसा करेगा, तो अनावश्यक कष्ट से सुरक्षित रहेगा।

जो समय से पूर्व रोता-धोता है, उसका विलाप अनावश्यक है। इसके अतिरिक्त उसका क्या कारण हो सकता है कि वह विलाप को अधिक पसन्द करता है।

जब तक हिरन पर भाला न चलाया जाय, तब तक वह नहीं रोता। इसी प्रकार ऊदबिलाव भी तब तक नहीं रोता, जब तक कि शिकारी कुत्ते उस पर न झपटें। किन्तु मनुष्य की विचित्र दशा है। वह बहुधा मृत्यु के भय से ही मर जाता है और यह भय मृत्यु की तुलना में अधिक संकटप्रद होता है।

अपने कर्म के उत्तरदायित्व के प्रति हर समय तैयार रह। यदि तू ऐसा करेगा, तो आनन्द-विभोर हो मृत्यु के लिए तैयार रहेगा। सबसे उत्तम मृत्यु वही है, जिससे समय के पहले ही डरा न जाय।

२५ | बुद्धि और विवेक

बुद्धि तथा विवेक अमूल्य प्रसाद हैं, जो मनुष्य को प्रदान किये गये हैं। धन्य है वह पुरुष, जो इनका उचित प्रयोग करता है। जिस प्रकार एक पहाड़ी झरना अपने सामने आनेवाली सभी वस्तुओं को बहा ले जाता है, उसी प्रकार साधारण सम्मति उस व्यक्ति की बुद्धि को जीत लेती है, जो जड़-बुनियाद पर बिना विचार किये उसका अनुगामी हो जाता है।

किसी विषय पर स्वीकृति देने से पूर्व इस बात पर भलीभाँति विचार कर ले कि वह सत्य है, केवल धोखा नहीं, क्योंकि जिसके औचित्य पर सहसा तुझे विश्वास हो जाता है, अधिकतर वह अनुचित और गलत सिद्ध होता है।

दृढ़ता और धैर्य से अपने संकल्प को सुदृढ़ कर, क्योंकि अपने अपमान का उत्तर तुझीको देना होगा।

यह विचार न कर कि किसी कार्य के औचित्य का प्रमाण उसकी पूर्ति पर आधृत है। याद रख! आकस्मिक घटनाओं पर मनुष्य का अधिकार नहीं।

सावधान! दूसरे की बुद्धि तथा विवेक को केवल इसलिए बुरा मत कह कि तेरा उससे विरोध है। क्या यह सम्भव नहीं कि दोनों ही गलती पर हों?

जब तू किसी व्यक्ति का आदर-सत्कार उसके पद और पदवी के कारण करता है और पद-विहीन व्यक्ति को तुच्छ जानता है, तो यह कहना होगा कि तू उस व्यक्ति की भाँति है, जो ऊँट की सुन्दरता और कुरूपता का मूल्यांकन उसकी नकेल से करता है।

शत्रु का वध करने के पश्चात् कदापि यह न सोच कि तेरा प्रतिशोध पूर्ण हो गया। बल्कि सच तो यह है कि तूने उसे अपने अधिकार-क्षेत्र से बाहर कर दिया। वह आराम में हो गया और अब तेरे पास उसे क्षति पहुँचाने का कोई साधन नहीं रह गया।

क्या तेरी माँ के आचार बुरे थे ? क्या तुझे यह सुनकर खेद नहीं होता कि तेरी पत्नी में कोई विशेष दोष है ? क्या तुझे उसकी धिक्कार पर दुःख नहीं होता ? यदि कोई इन कारणों से तुझे नीच जाने, तो यह अशिष्टता का पाप है; क्योंकि तू दूसरों के कर्म का उत्तरदायी नहीं हो सकता ।

अपने रत्नों का इस कारण अनादर न कर कि वे तेरे अधिकार में हैं और न दूसरों के रत्नों को इस कारण अमूल्य जान कि वे दूसरों के अधिकार में हैं । बुद्धिमान् व्यक्ति के हाथों में प्रत्येक वस्तु का मूल्य अधिक हो जाता है ।

केवल इस कारण अपनी पत्नी का निरादर न कर कि वह तेरे अधीन है । उस व्यक्ति को नीच समझ, जो तुझे उसकी उपेक्षा या अनादर की सलाह देता है । वह तेरे गुणों के कारण तेरे अधीन हुई है । तू उससे केवल इस कारण प्रेम में कमी न कर कि वह तेरी अत्यधिक आभारी है ।

यदि तूने ईमानदारी और न्याय से उसके हृदय को अपनी ओर आकृष्ट किया है तो अब, जब कि तेरा उसके साथ विवाह हो गया है, उसकी उपेक्षा न कर । यदि वह तेरे हाथ से जाती रही, तो तुझे बड़ा खेद होगा ।

जो अपनी पत्नी को पत्नी होने के कारण सबसे अच्छा समझता है, वह चाहे तुझसे अधिक बुद्धिमान् न हो, पर तुझसे अधिक सुखी अवश्य होगा ।

अपने मित्र की हानि का अनुमान केवल उसके आँसू बहाने से न कर । कभी-कभी अत्यधिक दुःख पूरा-पूरा प्रकट करना असम्भव होता है ।

किसी कार्य का मूल्यांकन उस कोलाहल और धूमधाम से मत कर, जिसके साथ वह किया गया । पूर्ण सज्जन अनेक बड़े-बड़े काम करते हैं, किन्तु उनकी कार्यपरता में तनिक भी असाधारण स्वभाव का प्रदर्शन नहीं होता ।

प्रसिद्धि सुननेवाले के कानों को विस्मित कर देती है, किन्तु परितुष्टि मनुष्य के हृदय को आनन्द और प्रसन्नता से भर देती है ।

किसी दूसरे के सत्कर्म के प्रति यह न कह कि वह दुराशय से किया गया है । तू उसके मन के भेद को नहीं जान सकता । किन्तु संसार ऐसे दोषान्वेषण से जान लेगा कि तेरे मन में ईर्ष्या और विद्वेष भरा है ।

पाखंड में मूर्खता और पाप समाविष्ट है । ईमानदार होना सरल है, किन्तु ईमानदार बनना कठिन है ।

किसी क्षति के प्रतिशोध की तुलना में किसी उपकार के प्रति कृतज्ञता के लिए अधिक तत्पर रह, ताकि क्षति उठाने के स्थान पर तेरे ऊपर अधिक कृपा हो ।

घृणा की अपेक्षा प्रेम प्रकट करने में अधिक तत्पर रह, ताकि तुझसे प्रेम करनेवालों की संख्या में वृद्धि हो, न कि तुझसे घृणा करनेवालों की संख्या में । प्रशंसा में सचेष्ट और निन्दा से विरत रह, ताकि लोग तेरे गुणों की सराहना कर तेरे अवगुणों को क्षमा करें ।

सदाचार को सदैव पुनीत, शुभ और स्वयंसिद्ध गुण समझकर अपना, न कि इस विचार से कि साधारणतः इसका आदर किया जाता है। इसी प्रकार दुराचार को बुरा समझकर उसका निषेध कर, न कि इस विचार से कि साधारणतः उस पर कुदृष्टि पड़ती है।

ईमानदार होने की कामना कर, तो सदा ईमानदार रहेगा। अनियमित कार्य करनेवाला भला काम करने में भी आगा-पीछा सोचता रहता है। वह सदा इसी चेष्टा में रहता है कि किस प्रकार अपनी कूटनीति से लाभ उठाये।

बुद्धिमान् और विवेकी व्यक्तियों के मुख से धिक्कार सुनना इससे सौगुना अच्छा है कि तू नादानों के मुँह से अपनी प्रशंसा सुने। बुद्धिमान् व्यक्ति केवल इसलिए तेरी त्रुटियाँ तेरे समक्ष प्रकट करता है कि तू अपना सुधार कर सके। किन्तु जो व्यक्ति झूठी प्रशंसा करता है, वह तुझे अपनी तरह मूर्ख बनाना चाहता है।

कोई ऐसा काम करने की कभी हामी न भर, जिसे तू नहीं कर सकता। सम्भव है, वह काम कर सकता। सम्भव है, वह काम कर सकने की क्षमता रखनेवाले तुझे तुच्छ जानें।

दूसरों को ऐसी शिक्षा न दे, जिससे तू स्वयं अपरिचित है; क्योंकि जब तेरी आत्मप्रशंसा, दम्भ और अभिमान प्रकट होंगे, तो तू धिक्कार का पात्र समझा जायगा।

जिसने तुझे हानि पहुँचायी, उससे कदापि मित्रता की आशा न रख। हानि उठानेवाला क्षमा कर दे, यह तो सम्भव है, किन्तु हानि पहुँचानेवाले में यह गुण कभी नहीं मिलेगा।

जिसे मित्र बनाना चाहता है, उस पर अनुग्रह का बोझ मत लाद। उपकार के बोझ से दबकर वह तुझसे दूर भागेगा। थोड़े उपकार से तो मित्रता पैदा होती है, पर उसकी अति से दुश्मनी। फिर यह भी तथ्य है कि मनुष्य स्वभावतः कृतघ्न नहीं है। क्रोध उसकी प्रकृति से अलग नहीं किया जा सकता और वह ऐसे ऋण का भार उठाना नहीं चाहता, जिसे अदा न कर सके। जिसको उसने नुकसान पहुँचाया है, उससे सामना करने में वह शर्माता है।

दूसरों की समृद्धि पर न तो कुढ़ और न अपने शत्रु की विपन्नता पर खुश हो। क्या तू सहन करेगा कि दूसरे भी तेरे साथ ऐसा ही करें?

क्या तू यह चाहता है कि तुझे पूरे मानव-समाज का स्नेह मिले? अपने उपकार से सबको प्रसन्न रख। यदि इस माध्यम से तू स्नेह न प्राप्त कर सकेगा, तो याद रख, इससे उचित दूसरा साधन नहीं है। यह भी याद रख कि परोपकार द्वारा लोक-स्नेह न मिले, तो भी यह तो सिद्ध हो ही जायगा कि तू उसका अधिकारी है। ●

प्रगल्भता और घमण्ड

अहंकार और नीचता में एकरूपता नहीं, किन्तु मनुष्य दो विकारयुक्त वस्तुओं को भी मिला लेता है। वह एक ही समय में विनय की मूर्ति और दम्भ का पुतला है।

अहंकार बुद्धि के लिए विष है। वह त्रुटियों और अपराधों का पोषण करता है, किन्तु मनुष्य की प्रकृति में उसका समावेश है।

कोई व्यक्ति ऐसा नहीं, जो अपने को दूसरों से अधिक बुद्धिमान् और दूसरों को मूर्ख और नीच न समझता हो। स्वयं हमारा स्रष्टा हमारी धृष्टताओं से सुरक्षित नहीं, तो फिर हम एक-दूसरे से क्योंकर सुरक्षित रह सकते हैं ?

अन्धविश्वासों का मूल क्या है ? झूठी उपासना का व्यवहार कैसे प्रचलित हुआ ? ज्ञान से परे और विवेक से ऊँची बातों पर धृष्टतापूर्ण कल्पना कर लेने से और जो बुद्धि से बाहर की बातें हैं, उन्हें बुद्धिगत कर लेने से।

यद्यपि हमारा ज्ञान दुर्बल तथा सीमित है, फिर भी हम उसे उस प्रकार काम में नहीं लाते, जिस प्रकार लाना चाहिए। हम ईश्वर की महत्ता पर तनिक विचार नहीं करते। हम जब पूजा और उपासना में लीन होते हैं, तो अपने विचार को उसकी उच्चतम महिमा की ओर नहीं उठाते।

मनुष्य अपने सांसारिक शासक अथवा प्रशासक के विरुद्ध कानाफूसी से भी डरता है, पर ईश्वरीय व्यवस्था में त्रुटियाँ निकालने से नहीं डरता। वह उस वास्तविक स्रष्टा की महिमा भूल जाता है, उसके कामों में अपनी तुच्छ बुद्धि और अपने क्षुद्र विवेक से दखल देता है।

वह अपने सांसारिक शासक का नाम तो अशिष्टता से नहीं लेता, पर अपने स्रष्टा को किसी बुरे कर्म का साक्षी ठहराने में तनिक भी लज्जित नहीं होता।

जो शासक के दण्ड की आज्ञा मूक होकर सुनता है, वही स्रष्टा की योजना में दोषान्वेषण करता है, वह सर्वशक्तिमान् ईश्वर को अनुनय और चाटुकारिता द्वारा प्रसन्न, प्रतिज्ञाओं से खुश और प्राणों पर दृढ़ करने का व्यर्थ प्रयत्न करता है और जब उसकी प्रार्थना स्वीकार नहीं होती, तो उस पर झुंझलाता है।

हे मनुष्य ! अभी तक तेरे पापों का दण्ड तुझे क्यों नहीं मिला ? केवल इस कारण कि तेरे न्याय का नियत समय अभी नहीं आया है।

तू ऐसा घमण्ड न कर कि बादल और बिजली से लड़ूँगा। स्रष्टा की वन्दना से भी इसलिए विमुख न हो कि वह तुझे अपराध पर दण्ड देगा। यह तेरा पागलपन है, जो तुझ पर सवार है। ईश्वर के प्रति निर्भयता तेरे ही लिए हानिकारक है।

हे मनुष्य! स्रष्टा की भक्ति से उदासीन रहते हुए भी तू ऐसी आत्म-प्रवंचना करता है कि मैं ईश्वर का प्रिय हूँ! लेकिन ऐसे भ्रामक विश्वास के साथ तेरा कृतघ्न जीवन कैसे बीत सकता है?

मनुष्य, जो सृष्टि में एक कण के सदृश है, वह भी यह विश्वास रखता है कि पृथ्वी और आकाश उसीके लिए बनाये गये हैं। वह सोचता है कि प्रकृति उसीके कल्याण और उसीके लाभ के लिए है।

जिस प्रकार मूर्ख पानी में पेड़-पौधे और आबादी की छाया को हिलती देखकर समझता है कि ये सब उसे प्रसन्न करने के लिए नाच रहे हैं, उसी प्रकार मनुष्य भी प्रकृति को अपने नियमित व्यवहार द्वारा कार्यपरायण देखकर सोचता है कि सब कुछ मेरे मन-बहलाव के लिए हो रहा है।

पृथ्वी को प्रकाशित करनेवाला सूर्य उसे गर्मी पहुँचाता है, तो वह सोचता है कि उसकी किरणें केवल मेरे ही लिए हैं। रात्रि के समय चन्द्रमा को आकाश में परिक्रमा करते देखकर समझता है कि यह भी मेरे ही मन-बहलाव के लिए हैं।

हे मूर्ख! क्या तू बावला हो गया है? यह तेरा प्रमाद और अनुचित गर्व है। सहिष्णु और विनयशील बन। इस बात को भलीभाँति बुद्धिगम्य कर कि पृथ्वी की परिक्रमा केवल तेरे लिए नहीं है। सर्दी-गर्मी की ऋतुएँ केवल तेरे लिए नहीं बनायी गयी हैं।

यदि तू, तेरे उपकरण तथा तेरी योनियाँ न होतीं, तो भी इनमें किसी प्रकार का परिवर्तन न होता। ईश्वर की सृष्टि के करोड़ों प्राणियों में से तू भी एक है, जो इन प्रसादों से लाभ उठाते हैं।

स्वयं को आकाश की भाँति ऊँचा न कर। तेरे ऊपर बहुत से देवता (फरिश्ते) हैं। मानव-समाज में भी अपने से निम्न कोटि के व्यक्तियों को हीन मत जान। वे भी उसी ईश्वर के पैदा किये हुए हैं, जिसने तुझे बनाया है।

तू ईश्वर के वात्सल्य और दया के कारण आनन्दमग्न है। फिर तू दूसरे प्राणियों को कष्ट पहुँचाने का साहस कैसे करता है? सावधान, कहीं ऐसा न हो कि उनका कष्ट तुझ पर लौट आये।

क्या वे सब, तेरे सहित उसी एक ईश्वर की भक्ति नहीं करते? क्या उसने हरएक के लिए अलग-अलग विधान नहीं बनाये हैं? क्या उसे उसकी रक्षा की चिन्ता नहीं? तू क्यों उसकी अवज्ञा का साहस करता है?

अपनी बुद्धि और विवेक को सृष्टि से श्रेष्ठ मत जान और उस बात को निरर्थक और झूठ मत कह, जो तेरे विवेक से परे है। तुझे ऐसा अधिकार किसने दिया कि तू दूसरों का न्याय करे ? संसार से इच्छानुसार कर्म का अधिकार किसने छीन लिया है ?

अनेक बातें आरम्भ में निरर्थक और झूठ समझी जाती हैं, जो बाद में ठीक और सच्ची सिद्ध होती हैं। कितनी ही चीजें जो इस समय ठीक और सच्ची समझी जा रही हैं, किसी समय निरर्थक और गलत समझी जायँगी। हे मनुष्य ! फिर तू किस बात को विश्वस्त रूप से जान सकता है ?

अपनी बुद्धि की सीमाओं में ही जहाँ तक सम्भव हो, परोपकार करता रह, प्रसन्नता तेरे साथ रहेगी। याद रख, बुद्धिमत्ता का प्रदर्शन महत्ता की दलील नहीं, बल्कि परोपकार ही तेरी महत्ता का सूचक है।

जिस बात को हम नहीं समझ सकते, क्या उसमें सत्य और असत्य समकक्ष नहीं जान पड़ते ? किन्तु हमारे अहंकार की ही लीला है कि हम उसमें भेद करने का दावा करते हैं।

जो बात हमारे विवेक से परे है, वह सहज ही मान्य हो जाती है और फिर गर्वपूर्वक कहा जाता है कि हम उसे खूब समझते हैं ! यह केवल मूर्खता और अज्ञान है।

वह कौन है, जो पूर्ण साहस से (विवेकातीत विषयों के प्रति) दावे करता है ? वह कौन है, जो (उनके बारे में) अपने विचारों के औचित्य का बखान कर रहा है ? निर्विवाद वह अत्यन्त मूर्ख और घमण्डी है।

प्रत्येक मनुष्य जब कोई धारणा बना लेता है, तो उस पर स्थिर रहने की उसकी इच्छा होती है। किन्तु वही सबसे आग्रह करता है, जो अधिक स्वेच्छाचारी है। उसे अपनी आत्म-प्रवंचना पर ही संतोष नहीं होता; बल्कि वह दूसरों को भी धोखा देना चाहता है और अपेक्षा करता है कि दूसरे भी उस पर विश्वास करें।

यह विचार कदापि न कर कि किसी विषय की सत्यता की परिपुष्टि का प्रमाण उसका चिरकाल से प्रचलन मात्र है और न यही कह कि जिन बातों पर बहुतों का विश्वास है, वे ही सत्य हैं।

प्रत्येक मानवीय विषय की परिपुष्टि के उतने ही सूत्र हो सकते हैं, जितने दूसरे के। यह अलग बात है कि बुद्धि ही अक्षम हो। ●

लोभ

दौलत पर अधिक ध्यान देना अनुचित है, अतः उसे प्राप्त करने की अधिक कामना न कर। जिसको मनुष्य अच्छी वस्तु कहता है, उसे प्राप्त करने की इच्छा और उस पर अधिकार पाने की खुशी केवल भावनाओं पर आधृत है। मूर्ख और असभ्य लोगों के परामर्श कदापि ग्रहण न कर। प्रत्येक वस्तु की वास्तविकता की स्वयं जाँच कर, तब तू लोभी न होगा।

दौलत की असीम आकांक्षा आत्मा के लिए घातक विष है। वह प्रत्येक गुण को, जो आत्मा के लिए लाभप्रद है, नष्ट कर देती है। वह मन में घर कर लेती है, तो सभी अच्छे गुण, ईमानदारी और प्रेम वहाँ से लुप्त हो जाते हैं।

लोभी व्यक्ति दौलत के लिए अपनी सन्तान तक को बेच डालता है। उसके माता-पिता चाहे मर जायँ, किन्तु वह अपनी थैली का मुँह कदापि न खोलेगा, दौलत के लालच में उसे अपनी प्रतिष्ठा का भी ध्यान नहीं रहता। वह खुशी की खोज में अपने-आपको आपत्ति-ग्रस्त कर लेता है।

दौलत की खोज में मन की शान्ति खोकर प्रसन्नता पाने की आशा करनेवाला उस व्यक्ति के समान है, जो मकान बेच उसकी सजावट के लिए सामान खरीदता है।

जहाँ लोभ का आधिपत्य होता है, वहाँ आत्मा दरिद्रावस्था में रहती है। जो दौलत को मनुष्य के कल्याण का आधार नहीं मानता, वह उसकी चिन्ता में दूसरे गुणों की हानि नहीं करता। जो गरीबी को अपनी भाग्यहीनता का कारण नहीं समझता, वह उसे दूर करने के लिए दूसरी आपदाओं को मोल नहीं लेता।

अरे नादान ! क्या अच्छे गुण तथा अच्छी प्रकृति दौलत से अधिक आदर-सम्मान योग्य नहीं ? क्या निर्धनता की तुलना में पाप अधिक बुरा और तुच्छ नहीं ? अपनी आवश्यकता के अनुसार प्रत्येक व्यक्ति जीविकोपार्जन की शक्ति रखता है। अतः जो कुछ थोड़ा या बहुत तुझे मिले, उसी पर सन्तोष कर। तब तू प्रसन्नता से उनके कष्ट और दुःख का उपहास कर सकेगा, जो दिन-रात दौलत इकट्ठी करने में व्याकुल रहते हैं।

ईश्वर ने चाँदी और सोने को जमीन के अन्दर दफन कर रखा है, मानो वे तेरे ध्यान देने योग्य ही नहीं। उनकी खानों को तू अपने पैरों से रौंदता है। क्या इससे प्रकृति का यही अभिप्राय नहीं कि चाँदी-सोना इस योग्य नहीं कि तू उनकी ओर अपना ध्यान आकृष्ट करे।

दौलत के हाथों हजारों भाग्यहीन जमीन में दफन होते हैं। उन्हें गुलामों से भी अधिक आपत्तिग्रस्त कौन बनाता है ?

वह भूमि बंजर होती है, जिसके गर्भ में सोना होता है। वहाँ घास तक नहीं उगती।

वहाँ न तो पशुओं को घास ही मिलती है और न खेती ही हो सकती है। वहाँ न जैतून के पेड़ फलते हैं और न अंगूर की बेलें फलती हैं। इसी प्रकार उस मन में अच्छे उत्तम गुण नहीं होते, जिसमें दिन-रात दौलत पाने की हाय-हाय मची रहती है।

दौलत बुद्धिमानों की आज्ञाकारिणी है, किन्तु मूर्खों की आत्मा की प्रशासक।

लोभी अपने धन की पूजा करता है, धन उसकी सेवा नहीं करता। धन उसके लिए वैसा ही है, जैसा रोगी के लिए ज्वर। ज्वर रोगी को जलाया और सताया करता है और मरने तक नहीं छोड़ता।

क्या दौलत के हाथों लाखों के गुणों का विनाश नहीं हुआ है ? क्या इसने किसी-का भला किया है ? * फिर वह कौन-सी ऐसी आवश्यकता है, जिसके कारण तू इसे अपने अधिकार में रखनेवाले के रूप में प्रसिद्ध होना चाहता है ?

क्या संसार में सबसे अधिक बुद्धिमान् और विचारवान् वे ही नहीं हुए, जिनके पास धन न था ? क्या बुद्धि से ही वास्तविक प्रसन्नता नहीं होती ?

संसार में अधिकतर दौलत उन्हीं लोगों के पास होती है, जो अधिक दुष्कर्म करते हैं। क्या तू इस सत्य को अस्वीकार कर सकता है ? क्या ऐसे व्यक्तियों का परिणाम सदा बुरा नहीं होता ? निर्धनता में अनेक वस्तुओं की आवश्यकता सामने आती है, किन्तु लोभ सभी वस्तुओं के होते हुए भी आराम नहीं करने देता। लालची किसीके साथ भलाई नहीं कर सकता। साथ ही वह किसी पर इतनी अधिक निर्दयता नहीं करता, जितनी अपने ऊपर करता है।

धन-प्राप्ति के लिए उद्योग तथा श्रम अवश्य कर, किन्तु उसे खर्च करने में दान-वीर और उदार बन। मनुष्य को वैसी वास्तविक प्रसन्नता कभी नहीं होती, जैसी कि दूसरों को आनन्दित और लाभान्वित करने में होती है। ●

---

* क्या प्रायः बुरे लोग ही दौलतमंद नहीं होते ?

अपव्यय

यदि दौलत एकत्र करने की लालसा के वाद दूसरा कोई निकृष्टतम विकार है, तो वह है धन का अपव्यय।

धन को व्यर्थ के कामों में खर्च करनेवाला वास्तव में दरिद्रनारायण को उसके स्वत्व से वंचित करता है, क्योंकि ईश्वर ने उसे उस दान का अधिकारी वनाया है। वह व्यक्ति, जो धन का अपव्यय करता है, पुण्य के मार्ग को अवरुद्ध करता है। वह स्वयं को उसी पुण्य के अभ्यास से वंचित रखता है, जिसका पुनीतफल उसके हाथ में है और जिसका प्रतिफल प्रसन्नता है।

धन की उपस्थिति में चैन से रहना कठिन है। मनुष्य धनाढ्य की अपेक्षा निर्धनता में वड़ी सरलता से अपना स्वभाव संयम में रख सकता है।

निर्धनता में केवल एक पुण्य की आवश्यकता है। उसका नाम है संतोष। किन्तु धनवान् यदि दया, दूरदर्शिता और संयम आदि अनेक गुण न रखता हो, तो उसे पापी समझना चाहिए।

निर्धन को केवल अपनी ही चिन्ता रहती है, किन्तु हजारों की भलाई और उनका कल्याण अमीर का दायित्व है। जो व्यक्ति अपने धन का उचित व्यय करता है और दरिद्रनारायण को देता है, वह वास्तव में अपनी आपत्तियों और विपत्तियों को कम करता है और जो व्यक्ति कौड़ी-कौड़ी जोड़कर एकत्र करता है, मानो वह दुःख और मुसीवतों का अम्वार लगाता जाता है।

अपने भाई के साथ तो तेरा यह व्यवहार होना चाहिए कि जिस वस्तु की तुझे स्वयं आवश्यकता है, वह भी उसे देने में तत्परता दिखा। किन्तु अनजान व्यक्ति को भी अपेक्षित वस्तु देने से मुँह मत मोड़।

विश्वास रख, उन लाखों रुपयों की तुलना में जो तेरे पास हैं और जिन्हें तू व्यय करना नहीं चाहता, उस एक पैसे में अधिक आनन्द है, जिसे तूने शुद्ध हृदय से किसी दरिद्रनारायण को दिया है और वह अव तेरे पास नहीं रहा।

प्रतिशोध

प्रतिशोध की जड़ कायरता है। इस दुर्व्यसन में सबसे अधिक वे ही अभ्यस्त हैं, जो सबसे अधिक नीच, अत्यन्त कमीने और बेहद छिछोरे होते हैं।

कायर के अतिरिक्त और कोई उनको कष्ट पहुँचाना नहीं चाहता, जिनसे घृणा हो।

किसी क्षति के प्रतिरोध की इच्छा से पूर्व आरम्भ में उस क्षति का अनुमान होता है। किन्तु सज्जन और उदार पुरुष को यह कहने में अपमान का अनुभव होता है कि अमुक व्यक्ति ने मुझे क्षति पहुँचायी। नुकसान चाहे तेरे समीप गम्भीर न हो, किन्तु क्षति पहुँचानेवाला अपनी करनी से अपनी नीचता सिद्ध कर देता है। तू उसकी उपेक्षा कर, नहीं तो तेरी गणना भी उसी कोटि में होगी।

जो तेरे साथ बदी करता है, तू उसके साथ नेकी कर। जो तुझे कष्ट पहुँचाने की घात में है, तू उसके साथ सद्-व्यवहार कर। यदि तू इस नियम का पालन करेगा, तो अपना मनोबल दृढ़ रख सकेगा और प्रतिशोध की इच्छा के बिना ही उसे दण्ड दे सकेगा।

तूफान और बिजली का प्रकोप सूर्य और तारों का क्या बिगाड़ लेता है? उनका प्रभाव तो नीचे पेड़ों, पहाड़ों पर ही होता है। इसी प्रकार बुरे स्वभाववालों से उत्तम प्रकृति के लोग प्रभावित नहीं होते। उनसे वे ही प्रभावित होते हैं, जो दूसरों को नुकसान पहुँचाने की घात में रहते हैं।

कायरता प्रतिशोध की जननी है। पुरुषार्थी इससे घृणा करता है। उदार और वीर पुरुष उनके साथ भी नेकी करते हैं, जो दुर्भाव रखते हैं।

हे मनुष्य! तू प्रतिशोध की इच्छा क्यों करता है? क्या उसके द्वारा तू अपने शत्रु को कष्ट पहुँचाना चाहता है? याद रख, तेरे इस कार्य से तुझे ही अधिक कष्ट होगा।

प्रतिशोध की भावना उसी मन को जलाती है, जिसमें वह पैदा होती है। वैसे ही वह व्यक्ति तो निश्चिन्त और निश्शंक रहता है, जिससे प्रतिशोध का विचार किया जाता है।

प्रतिशोध की भावना भयंकर कष्टप्रद है। ईश्वर ने तेरी प्रकृति ऐसी बनायी है कि तू कष्ट के लिए लालायित नहीं रहता। इन दोनों बातों पर विचार करके देख कि क्या प्रतिशोध तेरी प्रकृति का तकाजा है या विकृति का ? क्या क्षतिग्रस्त को और अधिक कष्ट देने की आवश्यकता है ? क्या उसकी उस पीड़ा में और पीड़ा मिलानी चाहिए, जो दूसरों ने उसे पहुँचायी है ?

प्रतिशोध की इच्छा रखनेवाले की उस क्षति से तृप्ति नहीं होती, जो उसे पहुँच चुकी है। वह अपने क्षोभ में उस दण्ड को भी सम्मिलित कर लेता है, जो दूसरों के भाग का था।

प्रतिशोध का संकल्प आरम्भ में दर्दनाक है और अन्त में खतरनाक। उसकी चोट यदा-कदा ही वहाँ पड़ती है, जहाँ मारनेवाला चाहता है। वह नहीं जानता कि अक्सर उसका वार उसी पर हो जाता है।

प्रतिशोधक जब अपने शत्रु को हानि पहुँचाने की घात करता है, तो अपनी ही बरबादी मोल लेता है। वह अपने वैरी की एक आँख फोड़ना चाहता है, किन्तु संयोग से उसकी दोनों आँखें फूट जाती हैं। अगर वह अपने संकल्प में सफल नहीं होता, तो रोता है और सफल हो जाता है, तो पछताता है। न्याय का भय उसकी आत्मा की शान्ति नष्ट कर देता है। उसे (प्रतिशोधक को) न्याय से बचाने की चिन्ता से उसके मित्रों के मन की शान्ति भी नष्ट हो जाती है।

क्या वैरी की मृत्यु तेरी परितुष्टि का कारण हो सकेगी ? क्या जब वह मृत्यु का आलिंगन कर लेगा, तब तेरे मन का क्षोभ शान्त हो जायगा ?

यदि तू चाहता है कि वह अपनी करनी पर पश्चात्ताप करे, तो उसे जीतकर उसके अपराध क्षमा कर दे। मृत्यु के पश्चात् न उसमें तेरी विकलता देखने की लालसा रहती है और न वह तेरे क्रोध का प्रकोप ही ठीक तरह से जान सकता है।

प्रतिशोध का अभिप्राय क्या है ? यही न कि विपक्षी विजित हो। प्रतिशोधक के विक्षोभ से प्रभावित होकर सामनेवाला ग्लानि का अनुभव करे। किन्तु विचारणीय है कि ऐसा प्रतिशोध तो क्रोध का परिणाम है। इसकी तुलना में अच्छा प्रतिशोध तो यह है कि तू क्षति पहुँचानेवाले को उपेक्षा की दृष्टि से देख।

क्षति और कष्ट के अपराध में जान से मार डालना कायरता है और ऐसा वही करता है, जिसके मन में भय समाया रहता है कि वैरी जीवित रह गया, तो वह प्रतिशोध लेगा।

मृत्यु से विवाद तो समाप्त हो जाता है, किन्तु सुयश की हानि होती है। कत्ल करना वीरता नहीं। वह सुरक्षामूलक कार्य अवश्य है। सम्भव है कि उससे कातिल सुरक्षित रहे, किन्तु यह काम न्याययुक्त और सम्मानसूचक नहीं।

किसी अपराध का बदला लेना तो बड़ा आसान है, किन्तु अपराधी और गलत काम करनेवाले को क्षमा कर देना बड़े सम्मान और ईश्वरपरायणता का काम है।

सबसे बड़ी विजय, जो मनुष्य को प्राप्त हो सकती है, वह है—अपनी वासनाओं पर काबू पाना।

वह व्यक्ति, जो हानि की सूचना के प्रति उत्सुकता प्रकट नहीं करता, हानि पहुँचानेवाले को हतोत्साह करता है।

जब प्रतिशोध का विचार तेरे मन में आता है, तो निश्चय ही तू यह स्वीकार करता है कि तुझे हानि पहुँची है। जब तू किसीके बारे में शिकायत के शब्द जबान पर लाता है तो तू साबित करता है कि तेरा दिल दुखा है। क्या तू चाहता है कि इस प्रकार अपने वैरी के घमण्ड और उद्दण्डता को बढ़ावा दे?

जब क्षति का अनुभव ही न किया जाय अर्थात् उसकी ओर से उदासीनता बरती जाय, तो वह क्षति क्षति ही नहीं रहती। फिर यह कैसे हो सकता है कि वह बदला ले?

यदि तू क्षति सहन करने में अपना अपमान मानता हो, तो इससे आसान यह है कि उसकी ओर ध्यान ही न दे।

उपकार से वह व्यक्ति लज्जित होगा, जो तुझसे वैर रखता है। तेरी सौजन्यता ही उसे तुझे हानि पहुँचाने से रोक लेगी।

हानि जितनी अधिक हो, क्षमा कर देने में तेरी उतनी अधिक प्रशंसा होगी। प्रतिशोध का औचित्य जितना अधिक होगा, दया उतनी ही अधिक आदरणीय समझी जायगी।

क्या तू इसका अधिकारी है कि अपने विषय में स्वयं ही न्यायी बने? क्या यह उचित है कि तू स्वयं किसी विषय में लिप्त हो और स्वयं ही दण्ड निश्चित करे?

इससे पूर्व कि तू कोई दण्ड निश्चित कर, दूसरों को यह कहने का अवसर दे कि हाँ, यह उचित है।

चूँकि घृणायुक्त प्रतिशोध आतंक का वातावरण पैदा करता है, इसलिए उससे घृणा की जाती है। किन्तु दया करनेवाले का सभी आदर और सम्मान करते हैं। उसके कर्म की प्रशंसा सदा-सर्वदा स्थायी रूप से होती है। छोटे-बड़े सभी लोग उससे प्रेम रखते हैं।

●

निर्दयता, शत्रुता और विद्वेष

यदि प्रतिशोध घृणा-योग्य है, तो निर्दयता क्या है ? निर्दयता में भी वैसी ही खराबियाँ हैं। हाँ, इसमें एक दोष यह भी है कि यह अपने आक्रोश के लिए एक-न-एक बहाना पैदा कर लेती है।

निष्ठुरता मनुष्य की प्रकृति का अंश नहीं है। वह इससे लज्जित होता है, बल्कि इसे मानवता के विरुद्ध कहता है।

अतः विचार कर कि इसका मूल क्या है ? इसकी उपस्थिति का क्या कारण है ? इसके पिता का नाम 'आतंक' और माता का नाम 'उद्विग्नता' है।

वीर पुरुष केवल उसी पर तलवार उठाता है, जो मुकाबला करने योग्य होता है। किन्तु ज्यों ही वह सिर झुका लेता है, उससे राजी होकर हाथ खींच लेता है। यदि कायर को पददलित किया जाय, तो इसमें बड़प्पन की कौन-सी बात है ? यदि अपने से छोटे व्यक्ति को अपमानित किया जाय, तो इसमें कौन-सी विशेषता है ? उद्दण्ड और धृष्ट पर विजय प्राप्त कर, किन्तु विनयशील और निस्सहाय व्यक्ति की सुरक्षा कर। तभी तुझे 'विजयी' का उच्च पद प्राप्त होगा। जिसमें यह गुण नहीं कि इसे प्रमाणित करे या इतना पराक्रम नहीं कि इस स्तर तक पहुँच सके, वही वधिक बनकर विजय पाता है। जो सबसे डरता है, वह सब पर हाथ उठाता है। हर समय भयग्रस्त रहने से ही अत्याचारी निष्ठुर होते हैं।

कुत्ते का एक छोटा-सा भी पिल्ला उसका मृत शरीर फाड़ने के लिए दौड़ता है, जिसके जीवित रहते वह उसके सामने आने तक का साहस नहीं करता था। किन्तु शिकारी कुत्ता अपने शिकार को मारकर उसकी लाश को नहीं फाड़ता।

गृह-युद्ध अत्यन्त रक्तरंजित होता है। कारण, वह कायरों और अयोग्य लोगों के बीच हुआ करता है। षड्यन्त्र करनेवाले कातिल होते हैं, क्योंकि जीव-हत्या से षड्यन्त्र पर परदा पड़ जाता है। भय से उनका दिल धड़कता रहता है कि षड्यन्त्र का पता चल जाने पर लेने के देने पड़ जायँगे।

यदि तू निष्ठुर होना नहीं चाहता, तो घृणा और शत्रुता के पास न फटक। यदि तू चाहता है कि मानवता के स्तर से न गिरे, तो ईर्ष्या न कर। दो ऐसे मार्ग हैं,

जिनसे मनुष्य की जाँच हो सकती है। एक तो यह कि किस व्यवहार से विपक्षी अधिक असंतुष्ट होगा और दूसरा यह कि उसके साथ ऐसा व्यवहार किया जाय कि उससे कम-से-कम कष्ट हो। अतः विपक्षी को ऐसे मार्ग पर ले चलने की व्यवस्था कर कि वह कम-से-कम कष्ट पहुँचा सके। फिर तू भी अपनी निर्विरोध वृत्ति का सहज परिचय दे सकेगा।

वह कौन-सी वस्तु है, जिससे मनुष्य लाभ नहीं उठा सकता? क्या मनुष्य उसी वस्तु से अधिक लाभ नहीं उठा सकता, जिससे उसे बहुत बड़ा कष्ट पहुँचे? शत्रुता का प्रदर्शन करने के विपरीत हमें परिवाद के अधिक अवसर सुलभ हैं। परिवादित व्यक्ति से सन्तुष्ट होने के अवसर प्राप्त हो सकते हैं। किन्तु परिवाद की सीमा का उल्लंघन हत्या के रूप में प्रकट होता है और यह इस बात का प्रमाण है कि हत्या घृणा की भावना से प्रेरित होकर की गयी है।

यदि तू किसी लाभ से वंचित कर दिया गया है, तो तुरन्त ही क्रोधित मत हो। हतबुद्धि होना सबसे बड़ी विपत्ति है। यदि तेरे शरीर से एक कपड़ा उतार लिया गया है, तो यह आवश्यक नहीं कि तू दूसरा भी दे दे।

जिस व्यक्ति की दशा पर तुझे ईर्ष्या और डाह हो, जो सम्मानित समझा जाता हो, उसके सम्बन्ध में सबसे पहले यह मालूम कर कि उसे यह सब कैसे प्राप्त हुआ और इनकी प्राप्ति के साधन क्या हैं? तब ईर्ष्या अथवा घृणा करने के स्थान पर तेरे मन में उसके प्रति दया-भाव पैदा होगा।

यदि उन्हीं मूल्यों पर सम्मान और सम्पन्नता देने का वादा किया जाय, तो यदि तू बुद्धि रखता है, तो अस्वीकार कर देगा।

क्या तू नहीं जानता कि तमगे किस रीति से प्राप्त होते हैं? केवल असंगत और झूठी खुशामद से!

मनुष्य को सत्ता कैसे प्राप्त होती है? केवल उनका गुलाम बनने से, जिन्हें सत्ता के वितरण का अधिकार है।

क्या तू इसलिए अपनी स्वतन्त्रता से वंचित होना चाहता है कि तुझे दूसरों की स्वतन्त्रता छीनने का अधिकार मिल जाय? क्या तू उन्हीं से ईर्ष्या करता है, जो ऐसा करते हैं?

मनुष्य को अपने से ऊपर के दर्जेवालों से कोई वस्तु नहीं मिल सकती, जिसका वह मुआवजा न दे सके, क्योंकि किसी वस्तु का मुआवजा उसके मूल्य से अधिक होता है। क्या तू संसार का व्यवहार बदल सकता है? क्या यह चाहता है कि खरीदी वस्तु और उसका मूल्य, दोनों अपने पास रखे?

जिस प्रकार उस वस्तु का लालच तेरे मन में पैदा नहीं हो सकता, जिसे तू लेना नहीं चाहता, उसी प्रकार घृणा और निर्दयता के कारणों को भी अपनी आत्मा से दूर कर।

जो सम्मान तुझे प्राप्त है, क्या तू उसे नष्ट करके कोई अन्य वस्तु लेना चाहता है? जो सदाचार और गुण तू रखता है, यदि दूसरा व्यक्ति उसे अपने कमीनेपन से नष्ट करता है, तो क्या उसकी दुर्दशा पर तुझे दया नहीं आयेगी ?

अपने को इस प्रकार प्रशिक्षित कर कि दूसरों की बाह्य सम्पन्नता पर विषाद-ग्रस्त न हो; तभी तो तुझे उनके वास्तविक आनंन्द से सुख प्राप्त होगा। तुझे उस समय आनन्द होगा, जब तू एक योग्य व्यक्ति को सम्मानित, प्रतिष्ठित और वैभवपूर्ण होते देखेगा, क्योंकि सज्जन पुरुष उस समय आनन्द-विभोर हो जाता है, जब किसी सदाचारी व्यक्ति का भाग्योदय देखता है।

जो व्यक्ति दूसरों को आनन्दित देखकर प्रसन्न होता है, वह वास्तव में अपनी प्रसन्नता में वृद्धि करता है। ●

३१ | उदासीनता

विनोद-प्रिय और प्रसन्न-चित्त व्यक्ति शोक और आपदा में भी प्रसन्न और हर्षित रहता है। किन्तु जिसका हृदय खिन्न और मलिन रहता है, वह आनन्द के अवसर पर भी खिन्न और उदासीन दीख पड़ता है।

उदासीनता या खिन्नता की जड़ आत्मा की निर्बलता है। साहस न होने के कारण इस निर्बलता को और भी शक्ति पहुँचती है। अतः तू उससे लड़ने के लिए कमर बाँध, देख, इस द्वन्द्व में पहले कि तेरा वार हो, वह मैदान छोड़ देगी।

वह तेरी शत्रु है। उसे अपने हृदय से निकाल दे। वह तेरे जीवन की मिठास में विष घोलती है, इसलिए अच्छा यही है कि उसे अपने मन में आने न दे। वह छोटे-छोटे विषयों में तेरी आत्मा को अधीर करती है। वह तुझे विचारणीय विषयों पर आकृष्ट होने से रोकती है। वह तुझसे छल करती है।

हृदय की म्लानता तेरे सद्गुणों पर आलस्य का परदा डाल देती है। वह उन्हें उन लोगों से छिपा रखती है, जो इन गुणों का आदर सत्कार करते हैं। वह उन गुणों को छिपाकर पद-दलित कर देती है, जिनका प्रकट होना आवश्यक है।

देख, वह निराश का बोझ तुझ पर लादकर तेरे हाथ बाँध देती है, ताकि तू उस बोझ को उतारकर फेंक न दे।

क्या तू नहीं चाहता कि नीचता से दूर रहे ? क्या तू कायरता से छुटकारा नहीं चाहता ? क्या तेरी यह अभिलाषा नहीं कि अन्याय तेरे मन से जाता रहे ? सावधान ! म्लानता को अपने हृदय में बिलकुल न आने दे ।

उदासीनता पर धर्म-परायणता का आवरण न डाल और न उसे ऐसा अवसर दे कि बुद्धि और विवेक के बहाने वह तुझे धोखा दे सके ।

धर्म ईश्वर का आदर और उसका डर सिखाता है । इस पर विषाद का आवरण न डाल । बुद्धि से तुझे सुख की प्राप्ति होती है । खिन्नता और बुद्धि दोनों में बड़ा विरोध है ।

संकट के अतिरिक्त और किस बात पर मनुष्य खिन्न हो सकता है ? वह प्रसन्नता को क्यों छोड़े, जब कि उसका स्रोत उसके हृदय में विद्यमान है । क्या अकारण विक्षुब्ध रहना संकट और आपदा की आवभगत करना नहीं है ?

जिस प्रकार मुहर्रम का मातमी शोकाकुल दीख पड़ता है ; क्योंकि स्वयं को वैसा प्रकट करने के लिए उसने अपने पर जबरदस्ती की है । वह रोता इस कारण है कि उसके आँसुओं का मूल्य चुका दिया गया है । यही दशा उस व्यक्ति की है, जो शोक-ग्रस्त रहने के लिए कोई-न-कोई आघात सहता है ।

कुछ विशेष अवसरों पर ही शोक निर्भर नहीं है, क्योंकि उन्हीं अवसरों से दूसरों को प्रसन्नता भी प्राप्त होती है ।

यदि तू लोगों से पूछे कि क्या उदासीनता और खिन्नता से उनके कोई काम बनते हैं, तो वे स्वयं स्वीकार करेंगे कि यह तो भारी मूर्खता है । बल्कि वे उसकी प्रशंसा करेंगे, जो मुसीबत को धैर्य से बरदाश्त कर अपने पुरुषार्थ से उसका मुकाबला करता है । लोग उसकी वाह-वाह करते हैं ।

खिन्नता प्रकृति के विरुद्ध है । इससे प्रकृति के कार्यों में बाधा पड़ती है । क्या खिन्नता उसी वस्तु को अप्रिय नहीं रखती, जिसे प्रकृति ने प्रिय बनाया है ? जिस प्रकार भारी तूफान से पेड़ गिर जाता है, फिर सिर नहीं उठा सकता, उसी प्रकार मनुष्य का मन खिन्नता के बोझ से दब जाता है और फिर उसकी शक्ति जवाब दे देती है ।

जिस प्रकार बर्फ वर्षा से पिघलकर बह जाती है, उसी प्रकार अश्रुपात से रूप-यौवन जाता रहता है । फिर उसमें कान्ति नहीं पनपती ।

जिस प्रकार मोती उस तेजाब से गल जाता है, जिससे पहले उसकी कान्ति का लोप हो जाता है, उसी प्रकार हे मनुष्य ! तेरी प्रसन्नता तेरी खिन्नता के हाथों विलुप्त हो जाती है । तेरी खिन्नता का प्रकार बादल जैसा है, जो तेरे हृदय पर छाया रहता है ।

सड़कों और राजपथों पर खिन्नता को देख । जन-साधारण के मार्ग पर दृष्टि डाल । क्या कोई खिन्नता की ओर आकृष्ट होता है ? उससे सभी लोग बचते और दूर भागते हैं ।

तनिक विचार कर कि वह किस प्रकार अपना सिर झुकाये हुए है ! वह उस फूलदार पौधे के समान है, जिसकी जड़ कट गयी हो । देख, शोकग्रस्त और खिन्न व्यक्ति किस प्रकार अपने नेत्र जमीन पर गड़ाये हुए है । अश्रुपात के अतिरिक्त उसका और कोई काम नहीं । क्या वह कुछ बातचीत करता है ? क्या वह बुद्धि और विवेक से ओतप्रोत है ? वह खिन्नता का कोई आशय नहीं जानता और न उसका कोई अवसर तथा औचित्य ही बता सकता है ।

यह ले ! उसकी शक्ति जवाब दे गयी । अब वह धीरे-धीरे मृत्यु के चंगुल में फँसता जा रहा है । देख, कोई नहीं जानता कि उसे क्या हुआ !

क्या तू बुद्धिमान् है और उसे नहीं देखता ? क्या तू धर्मपरायण और सत्यनिष्ठ है और उसकी भूल को नहीं पहचानता ?

यह भगवान् की दया थी कि उसने तुझे पैदा किया । क्या प्रसन्न रहने के लिए उसने तुझे नहीं बनाया ? फिर क्या कारण है कि तू उसकी आयोजना से मुँह छिपाता है ? क्या तू उसकी अनुकम्पा और दया को तुच्छ समझता है ?

जब तू सहज वृत्ति से पापरहित होकर प्रसन्न और आनन्दित रहता है, तो सबसे अधिक उसका आदर करता है । किन्तु इसके विपरीत तेरी निराशा और असहमति इस बात की सूचक है कि तू अपने ईश्वर के प्रति कृतघ्नता का प्रदर्शन कर रहा है । क्या उसने सभी वस्तुओं को परिवर्तनशील तथा नश्वर नहीं बनाया ? क्या तू उसके परिवर्तन और विनाश पर विलाप करने की हिम्मत करेगा ?

यदि हम प्रकृति के इस विधान से अवगत हैं, तो फिर शिकायत का कोई कारण नहीं बचता । यदि अवगत नहीं, तो उसमें केवल हमारा ही दोष है कि हम उसे नहीं देखते, जिसके प्रमाण प्रतिदिन हमारी आँखों के सामने आते रहते हैं ।

भलीभाँति सोच-विचार कर ले । यह तेरा काम नहीं है कि तू सृष्टि के लिए विधान बनाये । तेरा तो केवल यही काम है कि विश्वास-परायणता के साथ उनका पालन करे, चाहे वे कैसे ही हों । यदि उनसे तुझे कष्ट पहुँचता है, तो विलाप से वह और बढ़ जायगा । हाँ, यदि तू प्रकृति के विधान के अनुसार आचरण करेगा, तो तुझे कोई कष्ट नहीं पहुँचेगा और न उस पर ठीक तरह चलना तेरे लिए विलाप का कारण बनेगा । क्या धैर्यवान् बैल को अपने जुए का बोझ जान पड़ता है ? क्या चुस्त और चालाक घोड़ा अपने सवार के बोझ का अनुभव करता है ?

इस भ्रान्ति को अपने मन में स्थान न दे कि दुःख उठाने से मुसीबत का घाव भर जाता है । सच तो यह है कि दुःख औषधि के रूप में सामने आता है, किन्तु वास्तव में वह घातक विष है । कलेजे से तीर निकालने के बहाने वह उसे और अधिक चुभा देता है ।

जब उदासीनता तुझे मित्रों से अलग करती है, तो क्या वह यह नहीं कहती कि तू बात करने योग्य नहीं ? जब वह तुझे कोने में ले जाकर बैठा देती है, तो मानो इसका प्रचार करती है कि तू स्वयं अपने-आपसे लज्जित है।

सृष्टि का विधान ही यह है कि मनुष्य मुसीबतों के तीरों के कष्ट झेले। फिर यह बात बुद्धि के भी विरुद्ध है कि मुसीबत आये और उसका अनुभव न हो। अतः तेरा धर्म है कि तू आपदाओं का पुरुषार्थ और पराक्रम से सामना कर। हाँ, कष्ट का अनुभव भी मनुष्य के स्वभाव के विरुद्ध नहीं।

अतः तेरी आँखों से आँसू गिरें, तो गिरने दे, किन्तु पुरुषार्थ को हाथ से न जाने दे। फिर भी इतनी सावधानी अवश्य बरतनी चाहिए कि आँसू अकारण और अधिक न बहें। यदि आँसू बहाने का ही अवसर है, तो इसका यह मतलब नहीं कि उसकी झड़ी ही लगा दी जाय !

संकट के परिणाम का अनुभव अश्रु-जल जैसे बाह्य प्रमाणों से नहीं किया जा सकता। इसी तरह वास्तविक आनन्द को शब्दों में प्रकट करना संभव नहीं।

क्या दुःख से बढ़कर और कोई ऐसी वस्तु है, जिससे मनोबल क्षीण हो ? सन्ताप के अतिरिक्त और कौन वस्तु है, जिससे वह बुझा रहता है ? क्या कोई सन्तप्त पुरुषार्थ के कार्य के लिए कटिबद्ध हो सकता है ?

सावधान ! स्वयं को उन विकृतियों के वश न होने दे, जिनकी निरर्थकता निर्विवाद है, और न कभी पुण्य को पाप की भेंट चढ़ा। ●

आशा और आतंक

आशा के वादे गुलाब से भी अधिक मृदुल और मनोमोहक हैं। वे खिले हुए फूल से भी अधिक मनोहर हैं। किन्तु आतंक की धमकियाँ हृदय के लिए अत्यन्त भयप्रद हैं। वे उस घाव की तरह हैं, जो मन पर लगा हो।

उचित काम करने में किसी तरह के भय से न घबरा और न आशा के वादों पर रीझ। तभी तू सभी प्रसंगों और सभी स्थितियों में सन्तुलित स्वभाव का परिचय दे सकेगा।

सुशील व्यक्ति को उचित काम करने से मृत्यु का भय भी नहीं रोक सकता। जो दुष्कर्म से घृणा करता है, उसे किसी प्रकार का भय नहीं होता।

अपने सभी कामों में उचित रीति से प्रयत्न कर। निराशा को अपने पास न फटकने दे, अन्यथा कभी सफल नहीं होगा।

अकारण आतंक और भय से अपनी आत्मा को म्लान न कर। केवल कल्पित और व्यर्थ बातों से अपनी धीरता का गला मत घोंट।

भय से आपदा पैदा होती है। किन्तु जो आशा रखता है, वह मानो स्वयं अपनी सहायता करता है।

जिस तरह शुतुर्मुर्ग अपने सिर को छिपाता है और शेष शरीर को पूर्ण रूप से भूल जाता है, उसी तरह कायर का भय उसे खतरे में डालता है।

यदि तू किसी काम को असम्भव समझता है, तो तेरी निराशा उसे और भी अधिक गम्भीर और कठिन बना देती है। किन्तु धैर्यवान् व्यक्ति सभी कठिनाइयों को पार कर जाता है।

व्यर्थ की आशा से केवल मूर्ख ही प्रसन्न होता है। बुद्धिमान् उसका पीछा नहीं करता।

अपनी सभी आशाओं को बुद्धि के नेतृत्व में रख और इस बात पर ध्यान दे कि तेरी सभी इच्छाएँ उचित और उपयुक्त हों। असम्भव विषयों के लिए आशा का सहारा न ले। यदि तू ऐसा करेगा, तो सफलता का सेहरा तेरे सिर बँधेगा और निराशा तुझे कदापि न सता सकेगी। ●

३३ | आनन्द और सन्ताप

इतना हर्षित न हो कि उन्मत्त हो जा और न कोई ऐसा भारी शोक कर कि हृदय मलिन हो जाय। संसार में कोई ऐसी वस्तु नहीं, जिससे तेरे हृदय का आनन्द असीम हो सके और न कोई ऐसा कष्ट है, जो तुझे अँधेरे खड्डे में गिरा दे।

वह देख, सामने आनन्द-भवन है। बाहर से वह उत्कृष्ट रंगों से रंजित और सुन्दर दीख पड़ता है। तू उस कोलाहल से, जो हर समय इसमें रहता है, इसे पहचान सकता है। आनन्द-भवन की मालकिन द्वार पर खड़ी हो राह चलनेवालों को बुलाती है। वह प्रतिक्षण गाती-बजाती और हँसती रहती है।

वह सबको बुलाती और कहती है कि आओ, जिन्दगी के मजे उड़ाओ, आनन्द लूटो। वह उनसे कहती है कि यह सुख-सामग्री इस भवन के अतिरिक्त और कहाँ मिलेगी?

किन्तु सावधान ! इसके मकान में कदापि मत घुस और न उन लोगों से कोई सम्पर्क रख, जिनका वहाँ आना-जाना है।

वे स्वयं को 'आनन्द-पुत्र' कहते हैं। वे अट्टहास करते और प्रसन्न दिखाई देते हैं। किन्तु यह सब पागलपन, मूर्खता और अज्ञान है।

उनके हाथ दुष्कर्म से सने हैं, उनके पाँव पाप की ओर बढ़ रहे हैं, जो उनको मृत्यु की ओर ले जा रहे हैं। उनके चारों ओर आशंकाएँ रहती हैं। उनके पैरों के नीचे ही विनाश का विशाल गर्त है, जो उन्हें निगलने के लिए तैयार है।

दूसरी ओर दृष्टि डाल ! उस अँधेरे गर्त में, जहाँ मनुष्य की दृष्टि पहुँच नहीं पाती, दुःख और सन्ताप से भरा है।

इसके हृदय से आहें उठतीं और मुँह से सदैव रुदन-क्रन्दन की आवाज निकलती है। वह सर्वदा मनुष्य की आपदा पर प्रसन्न होता है।

वह मनुष्य के जीवन की छोटी-छोटी दुर्घटनाओं पर जो संयोगवश प्रकट होती हैं, आँसू बहाता रहता है। वह सर्वदा मनुष्य की निर्बलता और नीचता की चर्चा करता रहता है।

उसके विचार से संसार केवल दुष्कर्म और विनाश का घर है। प्रत्येक वस्तु को वह अपने हृदय के अंधकार से रँग देता है। निन्दा की प्रतिध्वनि उसके घर को सदैव उदास बनाये रखती है।

इसके कारावास के निकट कदापि न जा। इसकी श्वास विपाक्त है। उससे वे फल-फूल सूख जाते हैं, जिनसे जीवन का उपवन सुसज्जित रहता है।

आनन्द-भवन के मार्ग से बचकर अपने पैरों को संताप के शोक-नीड़ की ओर न भटका। पूरी सावधानी और संतुलन से बीच के मार्ग पर चल, थोड़ी चढ़ाई के पश्चात् तू आसानी से शांति के उपवन में पहुँच जायगा।

वहाँ शान्ति, सुरक्षा और संयम विराजमान हैं। वहाँ अशिष्ट प्रसन्नता का नाम भी नहीं है। वह गंभीर है, किन्तु कठोर नहीं। वहाँ जीवन के सुख-दुःख को धैर्य, पुरुषार्थ और संयम से देखा जाता है।

जिस प्रकार किसी ऊँचाई से आसपास के दृश्य देखे जाते हैं, उसी प्रकार तू भी अपने सिंहासन से उन लोगों की वास्तविकता को देख, जो अपनी वासनाओं के वशीभूत होकर 'आनन्द-भवन' के वासियों के साथ रह रहे हैं। साथ ही उन्हें भी देख, जो उदासीनता और विषाद से रुग्ण होकर अपना समय दुःख-दारुण के अन्धकारमय गर्त में बिताते हैं।

इन दोनों को तू शिक्षण और दया की दृष्टि से देख और इनकी भूलों को दुहराकर पथ-भ्रष्ट होने से बच।

●

क्रोध

जिस प्रकार तूफान पेड़ों को उखाड़ता और सृष्टि के स्वरूप को तहस-नहस कर देता है, जिस प्रकार भूकम्प आबादियों को नष्ट-भ्रष्ट कर देता है, उसी प्रकार क्रोधी का क्रोध अपने चारों ओर क्षति और हानि ही करता है।

विचार कर और अपनी निर्बलता पर ध्यान दे। दूसरों द्वारा तेरी क्षति और हानि हो, तो उन्हें क्षमा कर दे। वह भी क्रुद्ध होकर नहीं, बल्कि क्षमा-याचना कर।

क्रोध की भावना से ओत-प्रोत रहना ठीक वैसा ही है, जैसे अपना हृदय घायल करना या अपने मित्रों की हत्या के लिए तलवार पर धार रखना।

यदि तू उत्तेजना के छोटे-छोटे अवसरों पर धीरता का परिचय दे, तो यह तेरी बुद्धिमानी है। यदि तू उन्हें सर्वथा भूल जाय, तो तेरी भावनाएँ शान्त रहेंगी और उद्विग्नता जाती रहेगी। तुझे आत्मग्लानि भी नहीं होगी। तेरा मन तेरी भर्त्सना नहीं करेगा। देखता नहीं, क्रोध से वशीभूत हो मनुष्य बुद्धि और विवेक खो देता है। जब तक तू होश-हवास में है, दूसरों के पागलपन से शिक्षा ग्रहण कर।

जब तू क्रोध में भरा हो, तो कोई काम न कर। क्या तूफान के समय समुद्र में अपना जहाज चलायेगा ?

यदि क्रोध को नियन्त्रित करना कठिन हो जाय, तो उसका प्रहार रोकना ही बुद्धिमानी है। क्रोध के सभी स्थानों से बच। उनसे भलीभाँति सावधान रह। जब कभी क्रोध के कारण दीख पड़ें, तो उस समय अपने को सँभाल।

प्रतिशोध की इच्छा अपने हृदय में पैदा न होने दे और न क्रोध को ही स्थान दे। यदि तू ऐसा नहीं करेगा, तो हृदय को कष्ट होगा और अच्छे विचार जाते रहेंगे।

प्रतिशोध की इच्छा की अपेक्षा क्षति की क्षमा के लिए सदैव तैयार रह।

जो प्रतिशोध की घात में लगता है, वह स्वयं अपनी ही घात में रहता है।

मृदु उत्तर से क्रोध उसी तरह ठंडा हो जाता है, जिस तरह पानी से आग। मृदु उत्तर से सामनेवाला शत्रु न होकर मित्र बन जायगा।

मूर्ख आदमी किसीके अशिष्ट वचन पर क्रोधोन्मत्त हो जाता है। किन्तु बुद्धिमान् उपेक्षा से हँसकर मौन हो जाता है।

विचार कर कि बहुत कम चीजें क्रोध-योग्य हैं। आश्चर्य करेगा कि मूर्खों के अतिरिक्त दूसरे लोग क्यों क्रोध करते हैं।

जब केवल निर्बलता और मूर्खता से क्रोध आता है, तो वह अनुताप ही पैदा करता है। फिर लज्जा आती है, जिसकी पीठ पर खेद सवार होता है।

किन्तु उचित क्रोध के लिए किसी बात से न डर तथा हानि पहुँचानेवालों से सावधान रह। यदि तू इस तरह बरतेगा, तो अन्याय तेरे सामने काँपेगा और तुझे कष्ट पहुँचानेवाला स्वयं सजा पायेगा। ●

दया और करुणा ३५

जिस तरह वसन्त ऋतु में फूल खिलकर वृक्षों को छा देते हैं और गर्मी में फसलें पककर खेतों को पाट देती हैं, ठीक उसी तरह दयालु की दया विपत्तिग्रस्त लोगों को अपने अनुदान से मालामाल कर देती है।

दूसरों पर दया करनेवाला अपने लिए सहानुभूति पैदा करता है। जो व्यक्ति दया करने का अभ्यस्त नहीं, वह सहानुभूति पाने का भी अधिकारी नहीं है।

जिस तरह कसाई को भेड़ के बच्चे की दीनता और गिड़गिड़ाहट पर दया नहीं आती, उसी तरह निर्दय व्यक्ति के हृदय पर दूसरों की आपदा का तनिक भी प्रभाव नहीं पड़ता।

दया करनेवाले के आँसू ओस की बूँदों से भी अधिक सुन्दर और प्यारे होते हैं, जो गुलाब के फूलों से जमीन पर टपकते हैं।

अतः निर्धनों की करुणा की पुकार और आहें सुनकर अपने कान न बन्द कर और न निर्दोष को विपत्ति में फँसा देखकर अपना हृदय कठोर कर।

जब कोई अनाथ तेरी ओर देखे या कोई विधवा तुझसे कुछ सहायता माँगे, तो उनसे मुँह न मोड़। उनके दर्द में साझीदार बन। जब कोई उनका हाथ पकड़नेवाला न हो, तो उन्हें सँभाल।

जब तू किसी वस्त्रहीन को सर्दी से काँपता देखे, जिसका न कोई घर हो और न ठिकाना, तब अपनी दया और करुणा विस्तृत कर। दान-पुण्य के पंख फैला और उसे मृत्यु के चंगुल से बचा ले, ताकि तेरी आत्मा को असीम शान्ति प्राप्त हो।

कोई निर्धन रोगी रोग-शय्या पर पड़ा आहें खींचता हो, कोई अभागा जेलखाने के कष्ट से पीड़ित हो या कोई वृद्ध अपने निर्बल नेत्र सहायता के लिए तेरी ओर उठाये, और तू उस समय आमोद-प्रमोद एवं मनोरंजन में लीन रहकर उसके कष्ट और दुःख की ओर से आँखें फेर ले, तो तुझे धिक्कार है !

याद रख ! ईश्वर के प्रति तेरा विश्वास तब तक कुछ काम न आयेगा और न तेरी आशाएँ ही फलीभूत होंगी, जब तक कि तू दान न करे। केवल शब्द ही लाभप्रद नहीं हो सकते, जब तक कि तेरे कर्म भी पुनीत न हों।

वह करुणा किस काम की, जिससे दूसरों का कष्ट दूर न हो !

३६ | प्रेम और कामुकता

नवयुवक, सावधान ! धृष्टता और कामुकता के जाल से सावधान ! व्यभिचारिणी के धोखे और लालच में कदापि न आ। आकांक्षा के उन्माद से मूल अभिप्राय नष्ट हो जाता है। इच्छा के वश होने पर तू अन्धा हो विनाश में लुप्त हो जायगा।

अतः उसके मीठे बोल और फुसलाने में न आ और न उसकी मधुर बातों और उसके स्वरूप पर आसक्त हो।

यदि ऐसा करेगा, तो तेरा आरोग्य का स्रोत, जो आनन्द-नद का उद्गम है, शीघ्र ही सूख जायगा और सुख-चैन तुझे छोड़ जायँगे। जवानी में वृद्ध दीख पड़ेगा। उदय-कालीन सूर्य ढलता दिखाई पड़ेगा। यहाँ तक कि स्त्रियाँ तेरी दुर्बलता पर व्यंग्य करेंगी कि तुझमें बल-पौरुष शेष नहीं रहा।

जब किसी सुन्दरी में पुनीत गुण और लज्जा पायी जाती है, तो उसकी सुन्दरता आकाश के तारों से भी अधिक निखर उठती है। उसका रूप और सौन्दर्य अधिक मनो-मोहक हो जाता है।

उसका वक्षःस्थल कमल के फूल से उत्तम और मुस्कराहट गुलाब की कलियों से अधिक प्रिय और आकर्षक होती है। उसकी आँखें कबूतर जैसी होती हैं और उसका हृदय निर्मल तथा सरल होता है। उसका अधर मधु से अधिक मीठा और श्वास अरबि-स्तान की सुगन्ध से भी अधिक रोचक होती है।

प्रेम की घुलावटों और मिलावटों को अपने हृदय में स्थान दे। उसके (प्रेम के) तेज की पवित्रता तेरे हृदय में ऐसी विशेषता और नर्मी पैदा कर देगी कि उसी पर अच्छे-अच्छे चित्र अंकित हो सकेंगे।

स्त्री | ३७

हे प्रेम की रूपवान् बेटी ! दूरदर्शिता की शिक्षा की ओर ध्यान दे। सच्चे उपदेशों को अपने दिल में सँजोये रख, जिससे हृदय के गुण तेरे शरीर का सौन्दर्य बढ़ायें। इससे मुरझा जाने पर भी जैसे गुलाब में सुगन्ध बनी रहती है, वैसे ही तेरी याद भी स्थिर रहेगी।

अपने यौवन में, जब नवयुवक प्रेम के आवेश में तुझ पर दृष्टि डालें, तो तू उनके प्रयोजन को ताड़ जा और सावधान रह। उनके प्रलोभन और फुसलाने में कभी न आ। पूरी सावधानी और सतर्कता से उनके शब्द सुन।

याद रख, पुरुष की उचित सहायिका और सहकारिणी बनने के लिए ही तू पैदा की गयी है ! इसलिए नहीं कि उसकी विषयवासना बढ़ाये। तेरे अस्तित्व का यह आशय कदापि नहीं कि तुझसे उसकी विषय-वासना तृप्त होती रहे। बल्कि यह कि जीवन-यात्रा के श्रम में तू उसकी मदद करे। प्रेम से उसे सान्त्वना दे और उसके पोषण व देख-रेख के मूल्यस्वरूप अपना स्नेह भेट कर।

वह कौन है, जो पुरुष के हृदय को प्रेम से वश में करती तथा परिवार पर शासन करती है ?

लज्जा उसकी चाल से प्रकट है। उसके हृदय में निर्दोषिता का निवास है। उसके गालों पर सतीत्व का ओज छाया है।

उसके हाथ तो काम से खाली नहीं रहते, परन्तु पाँव आवारागर्दी से अन-भिज्ञ हैं।

उसके वस्त्र पवित्र, भोजन संतुलित तथा सारा जीवन सदाचारसम्पन्न है।

जो बात करती है, सभ्यता से करती है। उसके उत्तर नर्म, मीठे और सच्चे होते हैं। आज्ञा-पालन और अनुगमन उसकी जीवन-वृत्ति होती है। प्रसन्नता और संरक्षण पुरस्कारस्वरूप पाती है। दूरदर्शिता उसके आगे-आगे चलती है और पुण्य दाहिने हाथ उपस्थित रहता है। नेत्रों से नर्मी और प्रेम टपकता है, किन्तु विवेक हाथ में दण्ड लिये माथे पर आसीन रहता है। नीच और कामी पुरुषों की जबान उसके सामने बन्द हो जाती है। उसके सतीत्व का रोब उन पर छा जाता है और उन्हें मूक बना देता है।

जब निर्मूल दोषारोपण का बाजार गर्म होता है और किसी पड़ोसी की प्रतिष्ठा लोक-चर्चा का विषय बन जाती है, यदि परोपकार और सद्भाव उसे बोलने नहीं देता, तो मूकतासूचक उँगली उसके होठों पर होती है।

उसका मन गुणों का भण्डार है, इस कारण वह दूसरों को बुरा नहीं समझती।

उस पुरुष के भाग्यवान् होने में कोई शंका नहीं, जिसकी पत्नी में उच्च गुण पाये जायँ। वह पुत्र अत्यन्त भाग्यशाली है, जो ऐसी सदाचारिणी और शीलवती स्त्री के गर्भ से पैदा हो।

उसका घर सुख-शान्ति का निवास होगा। वह अत्यन्त विशिष्टता और विचार-शीलता से घर का शासन करती है और इसी कारण उसकी आज्ञा का पूर्ण रूप से पालन होता है।

वह बड़े तड़के उठती और घरेलू कामों में जुट जाती है। वह प्रत्येक व्यक्ति के लिए अलग-अलग काम नियत कर देती है।

वह काम-धन्धे में लीन रहती है। उसीमें उसे पूरा आनन्द मिलता है। उसके घर में प्रशिक्षण और सुधार पाया जाता है।

उसकी मितव्ययिता तथा उच्च व्यवस्था उसके पति के सम्मान का कारण बनती है। वह उसकी प्रशंसा से मन-ही-मन प्रसन्न होता है।

वह अपने बालकों को बुद्धि और विवेक सिखाती है और अपने गुणों के अनुसार सदाचार की दीक्षा देती है।

उसके शब्द बच्चों के लिए कानून का-सा प्रभाव रखते हैं। वे उसके संकेत पर उसकी आज्ञाओं का पालन करते हैं।

उसकी आवाज सुनते ही नौकर दौड़ते हैं, क्योंकि वह उन सबसे दया और प्रेम का व्यवहार करती है।

वह भाग्योदय के समय आपे से बाहर नहीं होती और दुर्भाग्य के आघात को धैर्यपूर्वक सहन करती है।

पति के कष्ट उसकी पुनीत सलाह से कम हो जाते हैं। कष्टों का वेग उसकी सहानुभूति और सान्त्वना से कम हो जाता है। वह अपना दिल उसके दिल में उँड़ेल देता और सुख का अनुभव करता है।

धन्य है वह व्यक्ति, जिसे ऐसी स्त्री प्राप्त हुई और भाग्यवान् है वह पुत्र, जिसने उसे 'माँ' कहकर पुकारा!

●

पति

३८

विवाह करके प्रकृति के कानून का पालन कर। एक सुशील पत्नी पसन्द कर तथा समाज का सच्चा और भद्र साझीदार बन।

अत्यन्त सावधानी के साथ जाँच कर। तुरन्त विवाह करने पर उद्यत न हो। तेरे चुनाव पर तेरा और तेरी संतान का अगला आनन्द निर्भर करता है।

यदि किसी सुकुमारी का अधिकतर समय बनाव-सिंगार में बीतता हो, यदि वह केवल अपने ही रूप पर आसक्त हो तथा अपनी प्रशंसा सुनकर प्रसन्न होती हो, यदि वह अधिक हँसती तथा जोर-जोर से बातें करती हो, यदि उसके पैर पिता के घर में न जमते हों, यदि वह आँखें फाड़-फाड़कर पुरुषों की ओर देखती हो, तो चाँद से भी अधिक सुन्दर और रूपवती होने पर भी उसकी ओर आँखें न उठा; उसके रूप और सौन्दर्य के जाल में कभी मत फँस।

किन्तु जब तू उसमें सौजन्य और बुद्धिमानी पाये और उसके आचार-व्यवहार रोचक हों, उसका हृदय पुनीत गुणों से सम्पन्न हो तथा रूप भी हृदयाकर्षक हो, तो उसके साथ विवाह कर। वह तेरी सहकारिणी और जीवन-यात्रा की बहुत बड़ी मित्र होगी। उसे भगवान् का प्रसाद समझकर दिल से प्यार कर और अपने सदाचार तथा उत्कृष्ट व्यवहार से उसका दिल अपने हाथ में ले ले।

वह तेरी गृह-स्वामिनी है। अतः हमेशा उसका सम्मान कर, जिससे नौकर उसकी आज्ञा का पालन करें।

बिना कारण उसकी अभिलाषा और आकांक्षा न रोक। चूँकि वह तेरी चिन्ताओं में साझीदार है, इसलिए अपनी प्रसन्नता में भी उसे अपना साथी बना।

उसकी त्रुटियों पर नरमी से चेतावनी दे। कठोरता से आज्ञाकारिणी बनाने का यत्न न कर।

अपने दिल के भेदों को उससे मत छिपा। उसके परामर्श सच्चे होते हैं। यदि तू उसकी सलाह से कार्य करेगा, तो कभी धोखा न खा सकेगा।

उसकी शय्या के प्रति ईमानदार रह। वह तेरी सन्तानों की माँ है।

जब वह दर्द और तकलीफ से पीड़ित हो, तू प्रेम से सान्त्वना दे। प्रेम और स्नेहभरी तेरी दृष्टि से उसका दर्द कम हो जायगा और दुःख मिट जायगा। दवा से अधिक तेरी प्रेमभरी दृष्टि उसके लिए लाभप्रद सिद्ध होगी।

उसका शरीर स्वभावतः कोमल होता है। उस पर सख्ती न कर, बल्कि अपने अवगुणों पर दृष्टि डाल। उसकी बौद्धिक निर्बलता के प्रति कठोरता का व्यवहार मत कर, बल्कि स्वयं अपनी त्रुटियों को याद कर लिया कर। ●

३९ | पिता

यदि ईश्वर ने तुझे सन्तान दी है, तो अपने कर्तव्य की गंभीरता का ध्यान रख। सोच और विचार कि तुझे क्या दिया गया है। तुझे जो सन्तान ईश्वर ने दी है, उसका पोषण करना तेरा धर्म है।

यह तेरे अधिकार में है कि तू अपनी सन्तान को अपने लिए वरदान या अभिशाप बनाये। उसे समाज का एक लाभप्रद या निरुपयोगी व्यक्ति बनाये।

उसे बचपन से अच्छी शिक्षा दे। विलास के विपरीत उसके हृदय को सच्ची शिक्षाओं और उपदेशों से भर दे। उसकी प्रकृति की अभिरुचि देखता रह। उसके मन को ठीक रख और कोई बुरा व्यसन उसमें पैदा न होने दे।

यदि तू ऐसा करेगा, तो वह उसी तरह विकसित होकर बढ़ेगा, जिस तरह पहाड़ पर सरो, जिसकी चोटी जंगल के सभी वृक्षों से ऊँची होती है।

अयोग्य पुत्र अपने पिता के लिए लज्जा और अभिशाप बनता है। इसके विपरीत शीलवान् और भद्र पुत्र उसके बुढ़ापे की लाठी और मान-मर्यादा का कारण होगा।

वह तेरी भूमि है। उसे ठीक करने का कष्ट उठा। तू जो कुछ बोयेगा, वही काटेगा।

उसे सदाचार की शिक्षा दे, तो वह तेरे लिए सम्मानजनक होगा। उसे आत्म-गौरव की शिक्षा दे, जिससे वह लज्जित न हो।

उसे धन्यवाद का ढंग सिखा, वह असीम लाभ उठायेगा। दान-वीर बना, वह लोकप्रिय होगा। संयम की शिक्षा दे, वह नीरोग रहेगा। दूरबीनी सिखा, सौभाग्य सदा उसके साथ रहेगा। श्रमशील बना, सम्पत्ति बढ़ेगी। परोपकार सिखा, उसका हृदय महान् होगा। ज्ञान-विज्ञान की शिक्षा दे, उसका जीवन कार्यदक्ष होगा। धर्म की शिक्षा दे, अच्छी मौत मरेगा। सत्यवादिता सिखा, संसार में सम्मानित होगा। पाखण्ड से बचाये रख, वह आत्मग्लानि से बचा रहेगा। ●

पुत्र

४०

मनुष्य को ईश्वर की सृष्टि के आदर्शों से ज्ञान ग्रहण करना चाहिए और उनकी शिक्षाओं का उपभोग करना चाहिए।

हे पुत्र ! जंगल में जा और सारस के बच्चे को देख। उससे शिक्षा ग्रहण कर। वह अपने निर्बल माँ-बाप को अपनी भुजाओं पर बैठाकर उड़ता और सुरक्षित स्थान में पहुँचाकर उनके लिए दाना-पानी जुटाता है। सन्तान की सुशीलता फारस के उस अगर से अधिक रुचिकर है, जिसे सूर्य की उपासना के समय जलाते हैं। वह उस मनमोहक सुगन्ध से बढ़कर है, जो अरबिस्तान के सुगन्धित मसालों के खेतों से पश्चिमी हवाएँ उड़ा लाती हैं।

अतः अपने पिता का सदा कृतज्ञ रह। वह तेरे अस्तित्व का कारण है। अपनी माँ का अनुग्रहीत रह; क्योंकि उसने तुझे नौ महीने पेट में ढोया है।

उनके शब्दों को सुन, जो तेरी भलाई के लिए कहे जाते हैं। उनके उपदेशों और चेतावनियों पर कान धर, जो विशुद्ध प्रेम से की जाती हैं। उन्होंने तेरी रक्षा की है तथा तेरे आराम के लिए स्वयं कष्ट उठाया है। अतः बुढ़ापे में उनका सम्मान कर तथा आदर के साथ उनकी शिक्षाओं को ग्रहण कर। उनके सफेद बालों का अनादर न होने दे।

अपने बचपन और लड़कपन के समय को मत भूल, जब कि कोई तेरा सहायक न था, तू बेबस था। अब यौवन की चपलताओं और धृष्टताओं को याद कर अपने बूढ़े माँ-बाप की नाजबरदारी कर। जीवन की सन्ध्या में उनकी सहायता से उदासीन मत रह। यदि तू ऐसा करेगा, तो वे मानसिक सन्तोष के साथ चिता तक पहुँच सकेंगे और तेरी सन्तान तेरा अनुकरण कर पुत्र होने के नाते सेवा-धर्म को अपना सकेगी। ●

४१ | भाई

तुम सब एक ही पिता की सन्तान हो । उसने तुम्हारा पोषण किया और तुम्हारी सुरक्षा का दायित्व निबाहा । एक ही माता ने तुम्हें दूध पिलाया है, अतः भाइयों से प्रेम-पाश में बँधे रहो, जिससे तुम्हारे पिता के घर पर सुख और समृद्धि बनी रहे । जब संसार में एक-दूसरे से अलग हो, तो उस सम्बन्ध को याद रखो, जो तुम्हें प्रेम और एकता की ओर निर्देश करता है । अपने खूनी रिश्ते की तुलना में पराये लोगों को प्रमुखता न दो ।

यदि तुम्हारा भाई संकटग्रस्त हो, तो उसकी सहायता करो । यदि तुम्हारी बहन मुसीबत में हो, तो उससे मुँह न मोड़ो । इस प्रकार पिता की छोड़ी संपत्ति से उसके पूरे परिवार का पोषण होता रहेगा और तुम्हारी निःस्वार्थता के कारण उसके प्रेम का दीप सदा जलता रहेगा । ●

बुद्धिमत्ता और मूर्खता | ४२

विवेक और बुद्धि की गणना ईश्वर के विशेष प्रसादों में है । अपने इच्छानुसार उसने प्रत्येक के लिए उसका एक भाग नियत कर दिया है ।

यदि उसने बुद्धि जैसा प्रसाद तुझे दिया है और सत्य की निष्ठा से तेरे हृदय को प्रकाशमय किया है, तो उसका उपयोग मूर्खों को शिक्षा देने और बुद्धिमानों से अपने को उन्नत बनाने में कर ।

सच्ची बुद्धि अपने ऊपर उतना अहंकार नहीं करती, जितना मूर्खता को अपने ऊपर घमंड होता है । बुद्धिमान् को प्रायः शंका होती है और वह अपने विचार को बदल देता है । किन्तु मूर्ख मनुष्य हठी होता है तथा वह तनिक भी सन्देह नहीं करता । वह अपने दम्भ और प्रमाद के कारण सर्वज्ञ और सर्वज्ञाता है, किन्तु परिचित नहीं है, तो केवल अपनी मूर्खता से ।

अनर्गलता पर घमण्ड घृणा-योग्य है। अधिक वक-वक करना निकृष्ट मूर्खता है। फिर भी वुद्धिमानों का काम है कि वे मूर्खों की धृष्टता सहन करें, धैर्य के साथ उनकी अशिष्टता को सुनें तथा उनके ओछेपन पर कृपादृष्टि करें।

अपनी प्रगल्भता पर गर्व न कर और न वुद्धि पर अभिमान कर। मनुष्य की वड़ी-से-वड़ी वुद्धिमत्ता 'अन्धी' और मूर्खतापूर्ण है।

वुद्धिमान् अपने अवगुणों और त्रुटियों को जानकर सहनशील और विनीत वना रहता है। किन्तु मूर्ख अपने हृदय के उथले जलाशय में झाँकता और तह में ठिकरियाँ देख प्रसन्न होता है। उन्हें वहाँ से वाहर लाता है और कहता है कि देखो ये मोती! वह अपने वन्धुओं और सहयोगियों की वाह-वाह से आनन्द-विभोर हो उठता है।

वह ऐसे विषयों के ज्ञान पर शेखी वघारता है, जो तुच्छ और वेकार हैं। किन्तु जिन विषयों की अज्ञता लज्जाजनक है, उनके ज्ञान की उसे हवा भी नहीं लगती।

वह ज्ञान के साधनों का उपयोग अज्ञता के उपार्जन में करता है, जिसका फल लज्जा और निराशा है। किन्तु विवेकशील ज्ञान के द्वारा अपने मन को प्रशिक्षित करता है। कलाकौशल में लीन रहकर उन्हें उन्नत वनाता है और जव दूसरों को उससे लाभ पहुँचता है, तो प्रतिष्ठा का मुकुट उसके सिर पर धरा जाता है। अर्थात् वह पुनीत गुणों के अर्जन को श्रेष्ठ ज्ञान-प्राप्ति का पर्याय मानता है और कल्याण के विज्ञान का जीवनभर विद्यार्थी रहता है।

अमीरी और गरीबी | ४३

धन और वैभव के साथ जिसके पास उसका उपयुक्त और उचित प्रयोग करनेवाला हृदय भी है, उस पर ईश्वर की कृपा-दृष्टि है। मानव-समाज में वह सुयश पाता है।

वह अपने धन से इसलिए प्रसन्न होता है कि उसके द्वारा उसे उपकार करने का अवसर मिलता है।

वह असहायों की सहायता करता और निर्वलों को सवलों के अन्याय से वचाता है। जो सहायता के पात्र हैं, ढूँढ़-ढूँढ़कर उनसे मिलता है, उनकी आवश्यकताओं की खोज करता और वुद्धि-विवेक द्वारा, प्रदर्शन और प्रशंसा की कामना के विना उनकी सहायता करता है।

वह सच्ची योग्यतावालों को उत्तम प्रेरणा देता और सहायता पहुँचाता है। वह बुद्धिमानों की मदद करता और उन्हें उचित पुरस्कार देता है। उदारता और दानशीलता से प्रत्येक शुभ संकल्प तथा लाभदायक योजना की उन्नति करता है।

वह बड़े-बड़े काम आरम्भ करता है, जिनसे प्रादेशिक धन की वृद्धि होती है तथा मजदूरी करनेवाले लोग वेकार नहीं रहने पाते। वह नये विज्ञान को जन्म देता और कलाओं की उन्नति करता है।

वह यह भलीभाँति जानता है कि मेरे चौके में जो कुछ मेरी आवश्यकता से अधिक है, वह दरिद्रनारायण का हिस्सा है। उनके उचित अधिकार से वह उन्हें वंचित नहीं रखता।

चूँकि उसका धन उसके शुभ उद्देश्यों में वाधक नहीं होता, इसलिए वह अपने धन पर प्रसन्न होता है। उसकी यह प्रसन्नता अत्यन्त उचित और वास्तविक है।

किन्तु वह व्यक्ति अभिशप्त तथा धिक्कार-योग्य है, जो केवल धन एकत्र करता है तथा उस पर व्यर्थ अधिकार जमाने में प्रसन्न होता है। वह निर्धनों को पीसता तथा उनके परिश्रम के पसीने का कुछ विचार नहीं करता। वह निर्दयी और अत्याचारी वनकर अपनी सम्पत्ति वढ़ाता है। उसके भाई तक की तवाही उसे प्रभावित नहीं करती!

वह अनाथों के आँसुओं को इस प्रकार पीता है, जैसे दूध। विधवाओं का करुण कन्दन उसके कानों के लिए मधुर संगीत है। धन के अनुचित प्रेम ने उसके दिल को पत्थर वना दिया है। कोई दुःख और कोई विपत्ति उस पर अपना किसी तरह का चिह्न नहीं छोड़ती। किन्तु दुर्भावनाओं की फटकार के चिह्न उसके मुखमण्डल पर साफ दीख पड़ते हैं। भय प्रत्येक क्षण उसे दवाये रखता है। उसके मन की चिन्ताएँ और आत्मघाती लालसाएँ उन विपत्तियों का प्रतिशोध हैं, जो उसने दूसरों पर डाली हैं।

ऐसे व्यक्ति के मन के दुःख और व्यथा की तुलना में दरिद्रता के कष्ट विलकुल तुच्छ और अवास्तविक हैं।

दरिद्र को सन्तुष्ट तथा अत्यन्त प्रसन्न होना चाहिए। उसकी प्रसन्नता के कई कारण हैं।

वह सन्तोष के साथ अपने रूखे-सूखे चौके में वैठता है, जहाँ झूठे चापलूस और छली नहीं पाये जाते। आश्रितों की समस्याएँ उसे नहीं सतातीं।

यदि उसके पास अमीरों की तरह खाना नहीं है, तो उसके साथ ही वह वहुत सारे रोगों से सुरक्षित भी रहता है, जो प्रायः धनवानों को तंग करते हैं।

भूख के कारण उसे रोटी वहुत मीठी लगती है, प्यास के कारण पानी स्वादु और मधुर प्रतीत होता है। विलासप्रिय अमीरों के स्वादु भोजनों की तुलना में उसका सादा भोजन अधिक पौष्टिक होता है।

वह अपनी मेहनत के कारण स्वस्थ रहता है। श्रमशील होने के कारण उसे जैसी गाढ़ी और आनन्ददायी नींद आती है, वैसी आलसी व्यक्ति को मोटे गद्दे पर भी नहीं आती।

वह अपनी आकांक्षाओं और आवश्यकताओं को धैर्य तथा सहनशीलता से सीमित रखता है। उसकी आत्मा को परितुष्टि से ऐसी शांति मिलती है, जो धन और वैभव के अर्जन की तुलना में अधिक मधुर है।

अतः यह उचित नहीं कि अमीर अपनी दौलत पर घमण्ड करे या गरीब अपनी दीनता के कारण हताश हो। करुणानिधान परमेश्वर दोनों का समान पोषण करता है। उसने अपने प्रसाद का बँटवारा इतना सन्तुलित और समान किया है कि मूर्ख को विश्वास ही नहीं हो सकता।

स्वामी और सेवक | ४४

हे मनुष्य! यदि तू दूसरों की सेवा करता है, तो केवल इसी कारण दुःखी न हो। ईश्वर ने तुझे इसीके लिए नियुक्त किया है। उससे भी बहुत सारे अच्छे अवसर तथा लाभ होंगे। इसके कारण तू बहुत सारी चिन्ताओं और आशंकाओं से सुरक्षित रहता है।

नौकर की प्रतिष्ठा उसकी स्वामिभक्ति और सत्यनिष्ठा में है। उसकी सबसे बड़ी विशेषता ईमानदारी और आज्ञापालन है।

यदि स्वामी रूठ गया हो या तुझे झिड़के, तो चुप रह। सहनशीलता के साथ उत्तर दे। तेरा विनीत स्वभाव तथा तेरा मौन भुलाया नहीं जायगा।

स्वामी के काम-काज तथा उसके लाभ पर दृष्टि रख। उस विश्वास की पूर्ति कर, जो वह तुझ पर रखता है।

तेरा समय और तेरा श्रम उसका है। अतः उनके विषय में कभी उसके साथ छल न कर, क्योंकि इनके लिए वह तुझे वेतन देता है।

यदि तुझे ईश्वर ने स्वामी बनाया है, तो अपने नौकरों के साथ न्याय का व्यवहार कर, जिससे वे तेरे प्रति विश्वासपात्र रह सकें। जब तू आज्ञा देता है, तो विचार कर कि क्या वह उचित है, जिससे उसका समुचित पालन हो सके।

तेरे नौकर का स्वभाव भी वैसा ही है, जैसा और मनुष्यों का। यदि तू कठोरता का व्यवहार करेगा, तो उससे उसके हृदय में डर पैदा हो सकता है, प्रेम नहीं।

झिड़की और चेतावनी के साथ दया मिला और शासन के साथ बुद्धि तथा अनुभूति, जिससे तेरी चेतावनी उसके हृदय पर असर करे और उसे अपने कर्तव्य-पालन में प्रसन्नता हो।

वह अनुगृहीत होकर तेरी सेवा करेगा। उसके हृदय में सदैव कृतज्ञता का उल्लास रहेगा। वह प्रेम के साथ प्रसन्नतापूर्वक तेरी सेवा करेगा। तू उसकी स्वामिभक्ति, प्रेम तथा लगन का उचित पुरस्कार देने में उदासीनता का परिचय कदापि न दे। ●

४५ | प्रशासक और प्रशासित

ईश्वर के आत्मीय महाराज! सभी मनुष्य तेरे समान हैं। उन्होंने सहमति से तुझे अपना शासक बनाया है। अतः तू अपने पद और अधिकार से अधिक उनके मान-सम्मान का और उनका विश्वास पाने का ध्यान रख।

तू राजसी वस्त्र धारण कर सिंहासन पर बैठता है। राजमुकुट तेरे सिर पर है। राज-दण्ड तेरे हाथ में है। यह उच्च पद केवल तेरे लाभ के लिए नहीं दिया गया, बल्कि पूरे राज्य के लाभ के लिए दिया गया है।

राजा का प्रताप प्रजा का कल्याण है। उसके शासन की नींव प्रजा के हृदय में पड़ती है।

बुद्धिमान् और विचारशील शासक का हृदय भी उसके महान् पद के अनुसार उच्च होता है। वह विभिन्न प्रश्नों पर विचार कर अपनी मर्यादा के अनुकूल काम करता है।

वह अपने राज्य के बुद्धिमानों को जुटाता है, उनसे निष्पक्ष मंत्रणा करता और ध्यान से उनके विचार सुनता है।

वह अपनी प्रजा को विशिष्ट दृष्टि से देखता है और प्रत्येक का, योग्यता के अनुसार कर्तव्य नियत करता है।

उसके प्रशासक न्यायप्रिय तथा मन्त्रिगण विचारवान् होते हैं। उसके दरबारी तथा सम्बन्धी उससे छल नहीं करते।

उसकी प्रेरणा से कलाएँ उन्नति करती हैं। विद्याओं को उसकी सहायता से लाभ पहुँचता है।

विद्वानों और बुद्धिमानों के सत्संग से उसे प्रसन्नता होती है। वह उनके दिलों में उन्नति करने का उत्साह पैदा करता है। उनके परिश्रम से राज्य की मान-मर्यादा और वैभव का विकास होता है।

वह व्यापारियों के अभियान का–जिससे व्यापार की उन्नति होती है–किसानों की कुशलता और परिश्रम का—जिससे देश का उत्पादन बढ़ता है—कलाकारों के विज्ञान का और विद्वानों की विद्या तथा अनुभूति का आदर करता एवं उनको उदारता से पुरस्कृत करता है। वह नयी बस्तियाँ बसाता है और सुदृढ़ जहाज बनवाता है। वह प्रजा की सुविधा के लिए जल-मार्ग ठीक करता है और जहाजों की सुरक्षा के लिए बन्दरगाह बनवाता है। इस प्रकार प्रजा के धन और राजा के बल की वृद्धि होती है।

वह अत्यन्त विचारशीलता और न्याय के साथ विधान लागू करता है। उसकी प्रजा अपने परिश्रम का उन्मुक्त फल पाती है। कानून के अनुसार आचरण करने में उसे प्रसन्नता होती है।

उसका निर्णय दया के सिद्धान्त पर आधृत होता है। किन्तु अपराधियों को दण्ड देने में वह अत्यन्त कठोरता और न्याय से काम लेता है।

वह अपनी प्रजा की प्रार्थनाओं को ध्यान से सुनता है तथा उस पर अत्याचार करनेवालों के हाथ रोकता है। उसे अन्याय से सुरक्षित रखता है।

प्रजा उसे अत्यन्त आदर और प्रेम से पितृ-तुल्य समझती है। उसे अपने धन और जीवन का रक्षक मानती है।

उसके प्रेम के कारण वह भी उसके साथ स्नेह करता है। सर्वदा उसकी उन्नति और विकास के लिए विचार करता है।

उसके विरुद्ध कोई शिकायत या निन्दा नहीं करता और न वैरियों के षड्यन्त्र और धूर्तता से उसे हानि पहुँचती है।

उसके नौकर स्वामिभक्त तथा सचाई के साथ काम करनेवाले होते हैं। वे उसकी सुरक्षा के लिए लोहे की दीवार का काम करते हैं। उसके सामने वैरियों की सेना इस प्रकार भागती है, जैसे हवा के सामने भूसा।

उसकी प्रजा के घरों में सुख और शान्ति का राज होता है। पराक्रम और प्रताप सदा उसके सिंहासन की परिक्रमा किया करते हैं। ●

४६ | सम्मान और पदवी

वास्तविक शिष्टता का सम्वन्ध आत्मा से है। सदाचार के विना विशुद्ध सम्मान और किसी से नहीं पाया जाता।

राजाओं की कृपा-दृष्टि दुराचार से प्राप्त हो सकती है और पदवी धन-दौलत से मिल जाती है। किन्तु इन्हें वास्तविक सम्मान नहीं कहा जा सकता।

अपराध करनेवाला व्यक्ति वास्तविक सम्मान तक नहीं पहुँच सकता और न धन-दौलत से मनुष्य वास्तविक भद्र वन सकता है।

यदि पदवी सदाचार का फल हो और उससे देश और जाति का सेवक सम्मानित किया जाता है, तो वह पदवी देने और लेनेवाला, दोनों आदरणीय हो जाते हैं। ऐसे आदर्श उदाहरणों से संसार को लाभ पहुँचता है।

क्या तू ऐसे कार्य पर, जिसे संसार नहीं समझ सकता, उच्च पद पाना चाहता है? क्या तू चाहता है कि लोग यह जानने का प्रयत्न करें कि तुझे यह पद क्यों प्राप्त हुआ है?

जव किसी पराक्रमी के गुण उसकी सन्तान में भी पाये जायँ, तो उसकी पदवी और सम्मान उनके लिए भी उचित है। किन्तु जब उसकी सन्तान में वे गुण न पाये जायँ और उन्हें सम्मान-योग्य न समझा जाय, तो यही कहा जायगा कि वे नीच और अधम जीवन के भागी हैं।

पैतृक सम्मान साधारणतः अच्छा ही समझा जाता है। किन्तु वुद्धिमान् केवल उसीकी प्रशंसा करते हैं, जो अपने पराक्रम से प्राप्त किया जाता है।

जो व्यक्ति स्वयं अयोग्य है और अपने पुरखों के पराक्रम और सम्मान पर गर्व करता है, वह उस चोर के समान है, जो वचाव के लिए मन्दिर में छिप जाता है।

अन्धे को क्या लाभ कि उसका वाप आँखवाला है? जो स्वयं गूँगा है, उसे क्या लेना है कि उसके पुरखे सुभाषी थे। इसी प्रकार नीच-प्रकृति मनुष्य को भी इससे कुछ लाभ न होगा कि उसके पूर्वज अत्यंत भद्र और सम्मानित थे।

जिसका मन पुण्य से भरपूर है, वही वास्तविक सज्जन है। भले ही उसे कोई पदवी और सम्मान न मिला हो, वह सदा सम्मानित और प्रतिष्ठित ही समझा जायगा।

वह स्वयं ही वह सम्मान पायेगा, जिसे दूसरे, अन्य लोगों से पुरस्कार-स्वरूप पाते हैं। तब वह पैतृक सम्मान पर गर्व करनेवालों से कहेगा, क्या ऐसे ही वे व्यक्ति थे, जिनके वंशज होने का आपको घमण्ड है ?

जिस प्रकार प्रत्येक वस्तु के साथ उसकी छाया रहती है, उसी प्रकार सम्मान सदाचार की सेवा में सदैव उपस्थित रहता है।

कदापि यह न सोच कि वीरता ही सम्मान प्राप्त करने का साधन है। इस पर भी विश्वास न कर कि जान जोखिम में डालने से सम्मान प्राप्त होगा। सम्मान कर्म पर नहीं, कार्य की विधि पर आधृत है।

शासन का दण्ड धारण करना आसान नहीं और न हर कोई सेनापति बन सकता है। जो काम तेरे लिए नियत हो, उसे भलीभाँति पूरा कर, प्रशंसा तेरे हिस्से में रहेगी। यह मत कह कि कठिनाइयों पर विजय पाना अत्यावश्यक है या अपने को खतरे में डाले बिना सम्मान नहीं मिलता। क्या सतीत्व किसी भी स्त्री के लिए प्रशंसा-योग्य नहीं और क्या ईमानदारी मनुष्य को प्रशंसा का पात्र नहीं बनाती ?

यश पाने की इच्छा अथाह और सम्मान प्राप्त करने की लालसा असीम होती है। जिसने हमें ऐसी भावनाएँ प्रसादस्वरूप दी हैं; पराक्रम के लिए ही दी हैं।

जब जन-कल्याण के लिए सर-धड़ की बाजी लगाना जरूरी होता है, जब देश-हित के लिए हम अपनी जान जोखिम में डालते हैं, तो उस समय पराक्रम के अतिरिक्त और कौन-सी वस्तु है, जो कल्याणप्रद संकल्पों को सुदृढ़ कर सके ?

सज्जन पुरुष सम्मान की प्राप्ति पर ही खुश नहीं हो जाते, बल्कि उनका गर्व इस पर आधृत होता है कि वे इसके पात्र हैं। लोग इस पर आपत्ति करें कि अमुक सज्जन पुरुष को क्यों सम्मानित नहीं किया गया—यह अच्छा है, या यह कि अमुक व्यक्ति अनायास ही क्यों सम्मानित किया गया ?

पराक्रमी जन-समूह में सबसे आगे होता है। वह आगे ही बढ़ता है और पीछे घूमकर नहीं देखता। हजारों व्यक्तियों को पीछे छोड़ने से उसे जो आनन्द होता है, उससे अधिक दुःख अपने से आगे औरों के दीख पड़ने में होता है।

पराक्रम प्रत्येक मनुष्य में विद्यमान है, किन्तु सबमें उसका प्रादुर्भाव नहीं होता। कुछ में आतंक उसे दबाये रखता है, तो कुछ में लज्जा और संकोच उसे प्रकट होने नहीं देते। यह आत्मा का आभ्यन्तरिक आवरण है, जिसे वह शरीर धारण करने पर सर्वप्रथम ओढ़ लेती और शरीर छोड़ने के समय सबके बाद में छोड़ती है। यदि उसका उपयोग उत्तम कार्यों में होता है, तो वह तेरे आत्म-सम्मान का कारण होता है। किन्तु बुरे कामों में व्यय होता है, तो तू लज्जित होकर अपना सर्वनाश कर डालता है।

पराक्रम विश्वासघाती और कृतघ्न पुरुष में भी रहता है। पाखण्ड अपने आँचल से उसका मुँह छिपाये रखता है और धोखेबाजी चिकनी-चुपड़ी बातों द्वारा उसे प्रकट नहीं होने देती। किन्तु एक-न-एक दिन यह भेद खुल ही जाता है।

साँप डसना नहीं छोड़ सकता, भले ही वह ठण्ड से कितना ही ठिठुर गया हो। ठण्ड से उसका मुँह बन्द रहे, तो भी उसके दाँत नहीं टूट जाते। उसकी दशा पर दया करके देख! वह तुझे अपने पराक्रम का प्रमाण अवश्य देगा। उसे सीने से लगाकर गर्मी पहुँचा! देख, तुझे डसता है या नहीं?

जो व्यक्ति वास्तव में सज्जन है, वह पुण्य और कल्याण के लिए ही सज्जनता से प्रेम करता है। वह ऐसी प्रशंसा से घृणा करता है, जो सम्मान की दासी हो।

पुण्य कितना दयनीय हो जाता, यदि दूसरों की प्रशंसा किये विना उसकी तृप्ति न होती? पारिश्रमिक तथा प्रतिफल की अपेक्षा पुण्य की मर्यादा के अनुकूल नहीं।

सूर्य जितना ऊँचा होता है, उतनी ही कम छाया डालता है। इसी प्रकार पुण्य जितना अधिक बढ़ता जाता है, प्रशंसा की लालसा उतनी ही कम हो जाती है। फिर भी उचित रूप से वह जितना सम्मानित और प्रशंसित किया जाता है, वह उसका प्रतिफल है, जिसे वह अस्वीकार नहीं करता।

सम्मान छाया की भाँति उस व्यक्ति से दूर भागता है, जो उसका पीछा करता है। लेकिन जो व्यक्ति उससे अपना पीछा छुड़ाना चाहता है, वह उसके पीछे लगा रहता है। यदि तू योग्यता के विना उसे प्राप्त करना चाहेगा, तो वह कभी तुझे प्राप्त न होगा और यदि तू उसके योग्य है, तो वह तेरा पिण्ड नहीं छोड़ेगा, भले ही तू अपने को कितना ही छिपाये।

सम्मानयुक्त कार्यों की खोज कर और जो उचित हों, उन्हें पूरा कर। तेरे मन की तृप्ति तुझे अत्यधिक आनन्द प्रदान करेगी। इस असीम आनन्द की तुलना में वह आनन्द तुच्छ है, जो लाखों मूर्खों की 'वाह-वाह' से प्राप्त होता है, जो इतना भी नहीं जानते कि तू प्रशंसा के योग्य है भी या नहीं! ●

विद्या

४७

मन के लिए सबसे उत्तम काम यह है कि वह अपने स्रष्टा की सृष्टि का गम्भीर अध्ययन करे।

प्रकृति का अध्ययन करनेवाला मनुष्य प्रत्येक वस्तु में ईश्वर का अस्तित्व तथा उसकी पूर्ण व्यवस्था पाता है। प्रत्येक वस्तु उसे उपासना की ओर आकृष्ट करती है। उसका हृदय आकाश की ओर उठा रहता है। उसका जीवन एक अखण्ड उपासना में बीतता है।

जब वह अपनी दृष्टि आकाश की ओर उठाता है, तो उसे दयामय ईश्वर के चमत्कार से भरपूर पाता है। जब वह पृथ्वी की ओर देखता है, तो तुच्छ कीड़े-मकोड़े पुकार-पुकारकर कहने लगते हैं कि सर्वशक्तिमान् ईश्वर के अतिरिक्त और कौन हमें पैदा करनेवाला है!

जब सूर्य अपनी धुरी पर स्थिर रहता है, जब ग्रह अपनी नियत सीमा में घूमते हैं, जब धूमकेतु तारों के प्रकाश में घूमता और पुनः अपने स्थान पर आ जाता है, जब तारे आकाश में चमकते हैं तो देख, उनकी आन-बान कितनी मनोमोहक दिखाई देती है। यद्यपि उनमें कोई कम नहीं, किन्तु एक-दूसरे के मार्ग में बाधक नहीं होते। उनकी चाल कितनी सुव्यवस्थित है!

हे मनुष्य! उन्हें तेरे स्रष्टा के अतिरिक्त और किसने बनाया है?

उस सर्वज्ञ के अतिरिक्त और किसमें यह शक्ति है कि उनके लिए नियमों का संकलन करे।

पृथ्वी पर दृष्टि डाल और उसकी उपज पर ध्यान दे। उसके गर्भ की परीक्षा कर और देख, उसमें क्या-क्या भरा है? यह सब कुछ उसी सार्वभौम सत्ताधारी की बुद्धि तथा शक्ति से नियोजित है।

घास किसके आदेश से उगती है? कौन नियत समय पर वनस्पति की सिंचाई करता है? देख, धरती पर बैल, घोड़े और भेड़ें चरती हैं। वह कौन है, जो इन सबके लिए चारा देता है?

जिस खाद्यान्न के वीज तू बोता है, उसे कौन पैदा करता है ? वह कौन है, जो एक दाने के हजार-हजार दाने तुझे वापस करता है ?

कौन जैतून को समयानुसार पकाकर तुझे देता है ? कौन अंगूरों को पकाता है ? यद्यपि तू इसके कारण नहीं जानता, किन्तु निश्चय ही किसीकी अपूर्व शक्ति यह सब काम कर रही है।

क्या तुच्छ-से-तुच्छ कीड़ा स्वयं पैदा हो गया ? क्या तू एक छोटी-सी मक्खी बना सकता है ?

अपने अस्तित्व का पशु भी अनुभव करते हैं, यद्यपि उन्हें इस पर आश्चर्य नहीं होता। वे अपने जीवन पर प्रसन्न हैं और नहीं जानते कि वह समाप्त होनेवाला है। प्रत्येक प्राणी एक-दूसरे के पश्चात् अपना कार्य-क्रम पूरा करता है। योनि कोई भी हो, हजारों पीढ़ियों के पश्चात् भी उसका अस्तित्व लुप्त नहीं होता।

तू जो आश्चर्य से प्रत्येक वस्तु को देखता है, उसमें ईश्वर की कला की खोज कर। इससे उत्तम कोई कार्य नहीं हो सकता कि उसकी कलापूर्ण महिमावाली आश्चर्य-जनक सृष्टि का अनुसंधान करे।

सृष्टि की उत्पत्ति में बुद्धि और कला का आविर्भाव पाया जाता है। उसके प्रत्येक अंग से उसकी कला और दया व्यक्त है। अपने-अपने स्थान पर सभी प्रसन्न हैं। किसीको दूसरे पर ईर्ष्या और द्वेष नहीं।

इसकी तुलना में, जवान और शब्दों के माध्यम से प्राप्त जानकारी तुच्छ है कि तू कला-सिन्धु विश्वकर्मा की सृष्टि में अनुसंधान करे।

जब तू कला से परिचित होकर कृतज्ञतापूर्वक उसके गुणगान में लीन हो, तो उसकी सार्थकता की भी खोज कर। याद रख, संसार में कोई वस्तु ऐसी पैदा नहीं होती, जो तेरे लाभ के लिए न हो। क्या इसी पृथ्वी से तेरे लिए आहार, वस्त्र, औषधियाँ आदि सब कुछ पैदा नहीं होतीं ?

विवेकी वही है, जो ईश्वरीय आयोजन का ज्ञान रखता है और बुद्धिमान वही है, जो उस पर विचार करता है। इसके बाद उस ज्ञान-विज्ञान की कक्षा है, जिससे उत्तमोत्तम कल्याण प्रकट हो। आडम्बर और अहंकाररहित ज्ञान प्राप्त करना अन्य विद्याओं से अधिक उत्तम है। अपने पड़ोसियों के कल्याण के लिए उन्हें प्राप्त कर।

जीवन और मृत्यु, आदेश और आदेश-पालन, स्वधर्म और कष्ट के अतिरिक्त अन्य वस्तुएँ भी हैं, जिन पर विचार आवश्यक है।

नीति-शास्त्र तुझे जीवन के कर्तव्य और सामाजिक धर्म में सहायता करता है। ब्रह्म-विद्या से परिचित होना भी आवश्यक है।

ये सव मूलभूत सिद्धान्त तेरे हृदय-पट पर अंकित हैं। आवश्यकता है केवल उनकी याद दिलाने की। तू सरलतापूर्वक उन्हें समझ सकता है। केवल एकाग्र हो, तो उन्हें प्राप्त कर लेगा।

शेष विद्याएँ केवल आडम्बर और वेकार हैं। वे केवल गर्व के लिए प्राप्त की जाती हैं, फिर भी वे मनुष्य के लिए लाभप्रद हैं। उनसे पुण्य और ईमानदारी नहीं वढ़ती।

ईश्वर की वन्दना और स्तुति करना तथा मानवमात्र से नेकी के साथ व्यवहार करना मनुष्य का परम धर्म है। आत्मज्ञान और आत्म-निरीक्षण से वढ़कर कोई लाभप्रद वस्तु नहीं, जो तुझे पुण्य की उत्तम शिक्षा दे।

सृष्टि-कर्ता की कलाओं में चिंतन और मनन के समान और कोई ऐसा ज्ञान नहीं, जिससे तपस्या के नियम समझ में आयें अथवा मानवमात्र के कल्याण के सम्वन्ध में जानकारी वढ़े। ●

सौभाग्य और दुर्भाग्य | ४८

सौभाग्य और उत्थान-काल में अत्यधिक मत फूल और न पराभव या दुर्भाग्य के समय अपनी आत्मा को हीनता के गर्त में ढकेल।

सौभाग्य के उत्कर्ष का ठहराव नहीं होता, अतः उसका भरोसा न कर। दुर्भाग्य की कटुता सदा नहीं रहती, अतः निराश न हो।

दुर्भाग्य को सहन करना कठिन है, किन्तु उत्थान और सौभाग्य के समय संयमी और मध्यमार्गी वना रहना उच्च कोटि की विवेकशीलता है।

उत्थान और पतन ऐसा उत्तम साधन हैं, जिनसे तू अपने हृदय की दृढ़ता जाँच सकता है। अन्य कोई वस्तु ऐसी नहीं, जिससे तू अपने आत्म-वल की परीक्षा कर सके। इसलिए जव तू इन दोनों दशाओं में से किसी दशा में हो, तो सावधान रह!

देख, सौभाग्य किस प्रकार हँस-हँसकर तेरी चापलूसी कर रहा है। किन्तु साथ ही अज्ञात रूप में वह तेरा मनोवल और पौरुष भी नष्ट कर रहा है।

यदि तू विपत्ति के समय दृढ़-प्रतिज्ञ रहा हो और आपत्ति के समय सहनशीलता को कसकर पकड़े रहा हो, तो भी सौभाग्य के समय अज्ञात रूप में अपने पौरुष से वंचित हो सकता है। तुझे फिर से वल प्राप्त करने की आवश्यकता पड़ती है।

विपत्ति में शत्रु तक पर दया की दृष्टि डालते हैं, किन्तु सफलता और प्रसन्नता में मित्र भी ईर्ष्या करने लगते हैं।

दुर्भाग्य में सत्कर्म तथा अच्छाई के वीज विद्यमान हैं। उससे वीरता और सहनशीलता का उद्भव होता है। जिसके पास सम्पन्नता की राशि है, क्या वह और अधिक पाने के लिए अपने को खतरे में डालेगा ? क्या सन्तुष्ट रहनेवाला अपने जीवन को खतरे में डालेगा ?

वास्तविक सत्कर्म प्रत्येक दशा में कुशलतापूर्वक अपना काम करता है। किन्तु मनुष्य उसका परिणाम प्राय: दुर्घटनाओं के समय ही देख पाता है।

दुर्भाग्य में मनुष्य देखता है कि सव उसे छोड़कर चल दिये। किन्तु उस समय हृदय के सभी पौरुष इकट्ठा होते हैं। अत: वह अपना आत्म-वल जाग्रत कर कठिनाइयों का सामना करने के लिए कमर कसता है। परिणामत: विपत्तियाँ पराजित हो जाती हैं।

सौभाग्य में वह अपने को सुरक्षित पाता है। चूँकि वह अपने आसपास रहनेवालों को अपना मित्र जानता है, इसलिए असावधान हो अन्त में धोखा खा जाता है। वह आनेवाले तथा अपने सामने के खतरे को नहीं देखता। वह दूसरों पर भरोसा करता है, इसलिए छला जाता है।

विपत्ति में प्रत्येक व्यक्ति अपनी आत्मा को सलाह दे सकता है। किन्तु सुख में आत्मा सत्य की ओर से अन्धी हो जाती है।

जिस दुःख से सन्तोष प्राप्त हो, वह उस प्रसन्नता की तुलना में अत्यन्त उत्तम है, जो मनुष्य को विपत्ति सहन करने योग्य न रहने दे और वह निराशा के समुद्र में डूव जाय !

भावनाएँ हमें मर्यादाओं का उल्लंघन करने पर विवश कर देती हैं। संयम विवेकशीलता का प्रतिफल है।

सत्यनिष्ठा के साथ अपना जीवन व्यतीत कर और जीवन के परिवर्तन में सन्तोष को हाथ से न जाने दे। काल-क्रम और घटना-चक्र से लाभ उठाने का उपाय कर, जिससे प्रत्येक अवसर तेरी प्रशंसा का कारण वन सके।

वुद्धिमान् व्यक्ति प्रत्येक वस्तु को अपने लाभ का साधन वना लेता है। इसी प्रकार वह भाग्य के सभी नीच-ऊँच, चढ़ाव-उतार को एक ही दृष्टि से देखता है। वह सत्कर्म से शासित होता तथा दुष्कर्म पर विजय पाता है।

सौभाग्य से घमण्डी न वन और दुर्भाग्य से निराश न हो। जान-वूझकर खतरे में मत पड़। किन्तु जव कोई खतरा सामने आ जाय, तो कायर वनकर उससे भाग न जा। खतरे से जूझने में कायरता तेरा साथ नहीं देती, अत: तू भी उसे तुच्छ समझ।

ऐसा न कर कि दुर्भाग्य तेरी आशा के पंख काट सके और न सौभाग्य को दूर-दर्शिता की आँखें फोड़ने दे। किसी काम में निराश हो जानेवाला सफलता प्राप्त न कर सकेगा। जिसने अपने सामने का खड्ड नहीं देखा, वह स्वयं ही उसमें गिरकर नष्ट हो जायगा।

जो व्यक्ति धनवान् होने में अपना कल्याण देखता है और अमीरी से कहता है कि 'तेरे ही ऊपर मेरी प्रसन्नता का आधार होगा', वह अपने जहाज का लंगर रेत में डालता है, जिसे जल की तेज धारा वहा ले जाती है।

जिस प्रकार पानी पहाड़ों से निकलकर समुद्र की ओर वहता है, नदियों के किनारे के खेतों को सींचता जाता है तथा रास्ते में कहीं भी नहीं ठहरता, उसी प्रकार दौलत भी मनुष्य के पास आती है। वह एक चंचल वस्तु है। कभी एक जगह नहीं ठहरती। हवा की भाँति प्रगतिशील है। तू क्योंकर उसे अपने अधिकार में रख सकेगा?

जब वह तुझे प्यार करती है, तो तू प्रसन्न हो जाता है; किन्तु ज्यों ही तू कृतज्ञता दरसाने के लिए झुकता है, वह तुझे रौंदकर दूसरे के पास चली जाती है!

कष्ट तथा रोग | ४९

शरीर के रोग आत्मा पर भी अपना प्रभाव डालते हैं। अर्थात् जब तक शरीर नीरोग न हो, आत्मा भी स्वस्थ रहीं रह सकती।

पीड़ा सबसे अधिक दुःखदायी है। इसका अनुभव बड़े वेग से होता है। किन्तु उसके लिए प्रकृति ने चिकित्सा-साधन भी दिये हैं। जब तेरी दृढ़ता जवाब देने लगे, तो बुद्धि की अपेक्षा कर और जब धैर्य हाथ से जाता रहे, तो आशा से काम ले।

सहनशीलता तो तेरी प्रकृति में प्रविष्ट है। क्या तू चाहता है कि चमत्कारिक ढग पर कष्ट से छुटकारा पा जाय? क्या इस बात पर कुढ़ेगा कि तुझे ही क्यों पीड़ा से मुकाबला करना पड़ा? यह तो सबके लिए है और सबको इसका सामना करना पड़ता है।

यदि तू इससे मुक्ति चाहे, तो यह अनुचित है। यह तो जन्मजात ढंग पर तेरी प्रकृति में प्रविष्ट हो चुका है। धीरता के साथ इन नियमों पर आचरण कर और इनके अधीन हो जा।

क्या तू ऋतुओं को कह सकता है कि अपनी गति को रोको, ताकि मैं निर्बल न होने पाऊँ ? क्या उस स्थिति में यह उचित नहीं कि तू उसे भलीभाँति सहन करे, जिससे विमुखता सम्भव नहीं ।

जो पीड़ा देर तक रहती है, वह सन्तुलित होती है । अतः उसकी शिकायत न कर । जिस पीड़ा में जोर-शोर होता है, वह शीघ्र दूर हो जाती है ।

शरीर आत्मा के आदेश-पालन के लिए बनाया गया है । यदि तू शारीरिक पीड़ा से आत्मा को कष्ट पहुँचाता है, तो मानो मालिक के ऊपर नौकर का शासन स्थापित करता है ।

जिस प्रकार बुद्धिमान् व्यक्ति कपड़े में काँटा लग जाने पर अपने-आपको नहीं झिड़कता, उसी प्रकार संतोषी व्यक्ति शारीरिक कष्ट होने पर अपनी आत्मा को भी दुःखी नहीं करता ।

मृत्यु

जिस प्रकार धातुओं के सम्मिश्रण की सफलता रसायनशास्त्र की शुद्धि का प्रमाण है, उसी प्रकार मृत्यु जीवन की कसौटी है । वह एक कस और ताव है, जिस पर हमारा आचार और चरित्र परखा जायगा ।

यदि तू किसीके जीवन को परखना चाहता है, तो पहले उसके जीवन के दिनों पर विचार कर ।

जीवनभर जैसी वृत्ति रहती है, अन्तिम समय वह स्पष्ट हो जाती है । छल-कपट और आडम्बर का अवसर बीत जाता है और सत्य प्रकट हो जाता है ।

जो व्यक्ति भलीभाँति इस नश्वर संसार से विदा होना चाहता है, उसका जीवन बुरी तरह नहीं बीतता । इसी प्रकार उस व्यक्ति के बारे में यह नहीं कहा जा सकता कि उसने अपना जीवन व्यर्थ गँवा दिया, जो जीवन के अन्तिम चरण मर्यादा और प्रतिष्ठा के कामों में लगाता है ।

जो उचित रीति से मृत्यु का आलिंगन करता है, वह व्यर्थ नहीं जनमा । जो व्यक्ति हँसी-खुशी के साथ देह त्यागता है, उसका जीवन व्यर्थ नहीं कह सकते ।

जिसे मृत्यु का ध्यान रहता है और वह सोचा करता है कि एक-न-एक दिन अवश्य मरना है, वह जीवनभर संतुष्ट रहता है। इसके विपरीत जो यह नियम भूल जाता है, वह किसी भी दशा में आनन्द नहीं पा सकता। उसकी प्रसन्नता पानी पर अंकित लकीरों अथवा उन रत्नों के समान है, जिनके गुम हो जाने का हर समय भय रहता है।

भलीभाँति संसार से विदा होने का ढंग सीख। ऐसा कर कि तेरी सब बुराइयाँ और तेरी सभी विकृतियाँ तुझसे पहले मर जायँ। धन्य है वह व्यक्ति, जो अपने जीवन के सभी काम मृत्यु के पहले पूरा कर लेता है। जब मृत्यु आती है, तो उसे कुल कामों से निवृत्त तथा तैयार पाती है। वह अवकाश की इच्छा प्रकट नहीं करता; क्योंकि अपने सभी कार्यों को पूरा कर चुका होता है।

मृत्यु से मत भाग, क्योंकि यह कायरता है। उससे भय भी मत कर, क्योंकि तू समझता ही नहीं है कि वह क्या है? जितना तू जानता है, वह केवल इतना ही है कि वह तेरी चिन्ताओं का अन्त कर देती है।

कदापि विचार न कर कि अधिक समय तक जीवित रहने में अधिक प्रसन्नता है। वह थोड़ा जीवन भी मनुष्य को मान-मर्यादा देता है, जो भले कार्यों में बिताया गया हो। ऐसे जीवन जीनेवाले की आत्मा मृत्यु के पश्चात् भी अनन्त सुख प्राप्त करती है।

●